वेदांत भास्कर

त्रैमासिक - हिंदी

श्रीगुरुपूर्णिमा, जुलाई २०२५

तृप्ती

समाधान

शांती

बाध

आनंद

निर्भयता

प्रसन्नता

॥ श्रीराम जय राम जय जय राम ॥

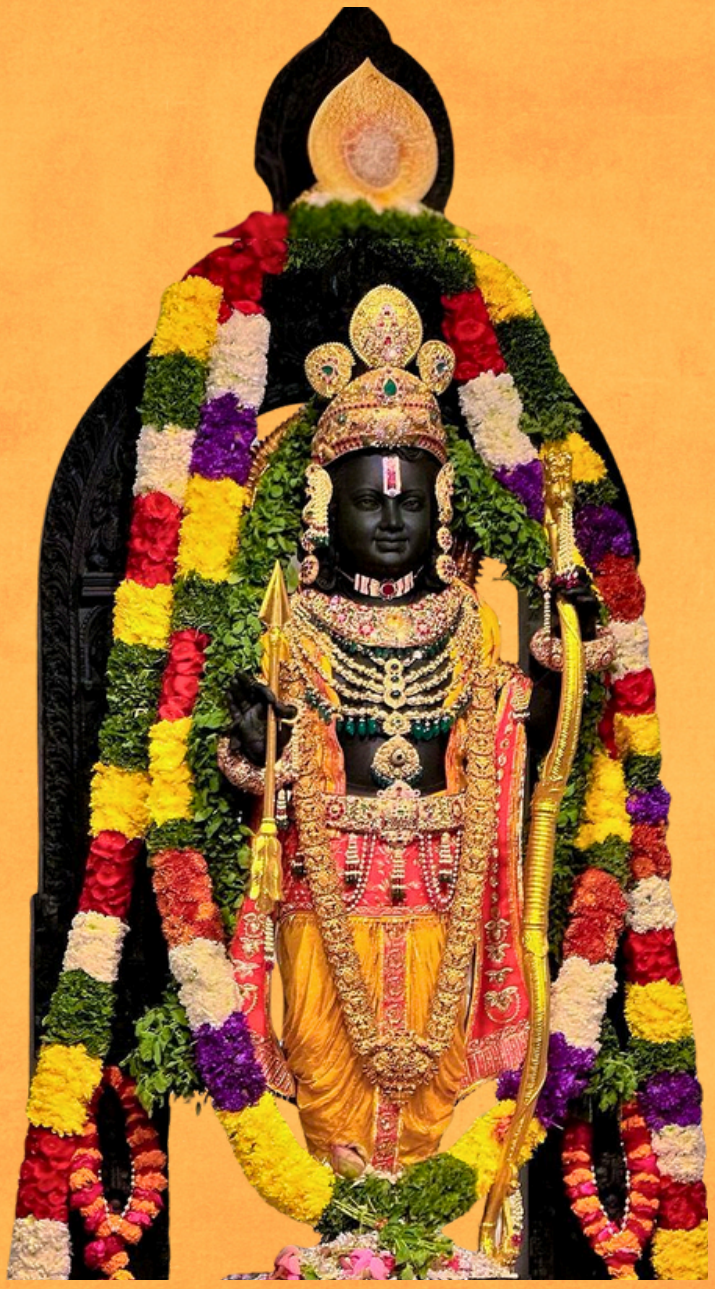

जुलाई २०२५ - श्रीगुरुपूर्णिमा
अंक १

वेदांत भास्कर अमेरिका

श्रीमद् आद्य शंकराचार्य प्रणीत केवलाद्वैत तत्वज्ञान देश-विदेश में अधिकाधिक साधकों तक पहुँचे और इस जीवनमुखी तत्वज्ञान का सारे जन उनका जीवन आनंदरूप होने हेतु लाभ करें यही वेदांत भास्कर संस्था का एकमात्र उद्देश्य है। जिन्होंने इस कार्य की नींव और आधारशिला रखी है, वे हैं सद्गुरु परम पूज्य डॉ. श्रीकृष्ण दत्तात्रेय देशमुख (अर्थात डॉ. काका)। उनके मार्गदर्शन में यह कार्य निरंतर आगे बढ़े और अधिकाधिक लोग स्वरूपानुभूति- जो मनुष्य जीवन का एकमात्र लक्ष्य है - की ओर अग्रसर हों, इसके लिए यह संस्था हमेशा तत्पर है। इस परमफल की प्राप्ति में सहायक बनने हेतु, अध्यात्मशास्त्र की जटिल प्रतीत होने वाली संकल्पनाओं को सरल भाषा में समझाने वाले विशेष अध्ययन वर्ग, सद्ग्रंथ वाचन, त्रैमासिक उपासना आदि उपक्रम इस संस्था द्वारा आयोजित किए जाते हैं। इसी प्रकार, सनातन भारतीय वैदिक संस्कृति के जीवन-मूल्यों की शिक्षा आज की युवा पीढ़ी तक पहुँचे, इस दृष्टि से नियमित बालसंस्कार वर्ग भी संस्था द्वारा चलाया जाता है। इस संस्था का अमेरिका में ५०१(c)(३) के अंतर्गत विधिवत पंजीकरण हुआ है।

संस्थापक और अध्यक्ष: श्री. मंगेश फडके

कोषाध्यक्ष: श्री. अशिष धाराशिवकर
सचिव: श्री. सचिन कोठावदे

कार्यकारी मंडल:
श्री. विवेक वाळवेकर – कार्यक्रम
श्री. राहुल सकदेव – प्रबंधन
श्रीमती. सोनाली फडके – शिक्षा

त्रैमासिक समिती सदस्य:
श्री. मिहीर जोशी
श्रीमती. मृणाल बुजोणे
श्रीमती. मृदुल देशपांडे
चि. अद्वैत फडके

विशेष आभार: श्री. मिलिंद जगन्नाथ कालेजी - हिंदी भावानुवाद

परमार्थ का अध्ययन करते समय भाषा बाधा न बने, इसके लिए वेदांत भास्कर यह त्रैमासिक **मराठी, हिंदी** और **अंग्रेजी** इन तीनों भाषाओं में उपलब्ध है।

पता: PO Box 1095, Morgan Hill, CA 95038.
ईमेल: newsletter@vedantbhaskar.org

अनुक्रमणिका

०१ सुखरूपता की खोज

अध्यात्म और जीवन – १ - सद्गुरू प. पू. श्रीकृष्ण दत्तात्रेय देशमुख
यदि परमार्थ नहीं किया तो क्या होता है ? - प. पू. मंदाताई गंधे
अध्यात्म और विज्ञान - पू. श्री. मंगेश फडके
पारमार्थिक संज्ञाएँ

०२ युवामंच

श्रीहनुमान चालीसा - वर्तमान पीढ़ी के लिए - डॉ. शेखर मायनिल (Neuroscientist)

०३ कार्यवृत्तांत

वेदांत भास्कर अमेरिका गतिविधियाँ- श्रीमती. मृणाल बुजोणे
उपक्रमों की झलकियाँ

इस मासिक में प्रकाशित हुए लेख, टिप्पणियाँ या अभिमत संबंधित लेखकों के व्यक्तिगत विचार हैं। वे संस्था या संपादक मंडल की आधिकारिक भूमिका से मेल खाते ही हों, यह आवश्यक नहीं है। संस्था की इन विचारों से सहमति है ही, ऐसा मान लेना उचित नहीं है।

© २०२५ वेदांत भास्कर अमेरिका। सर्वाधिकार सुरक्षित।
इस मासिक में प्रकाशित कोई भी लेख, चित्र या अन्य सामग्री, किसी भी रूप या माध्यम में, प्रकाशकों की पूर्व लिखित अनुमति के बिना पुनः प्रकाशित, संग्रहित या प्रसारित नहीं की जा सकती।

संपादकीय

॥ श्री सद्गुरूनाथ महाराज की जय ॥

भगवान कि कृपा और सद्गुरु के आशीर्वाद से, **वेदांत भास्कर** के प्रथम त्रैमासिक अंक का प्रकाशन सारे संबांधितों के लिये अत्यंत आनंद का विषय है। संस्था और इसका त्रैमासिक प्रकाशन का कार्य प्रवृत्तीलक्षण धर्म का भाग होते हुए भी, इसका उद्देश्य आंतरिक पवित्रता और आध्यात्मिक संकल्प में निहित है।

श्रीमद आद्य शंकराचार्य भगवद्गीता के भाष्य में जिस प्रवृत्तिरूप धर्म का उल्लेख करतें है - 'शुद्धसत्त्वस्य च ज्ञाननिष्ठायोग्यताप्राप्तिद्वारेण ज्ञानोत्पत्तिहेतुत्वेन च निःश्रेयसहेतुत्वम्' (शुद्ध अंतःकरण प्राप्त मनुष्य को आध्यात्मिक ज्ञानग्रहण योग्य बनाकर, परमसत्य की प्राप्ति में सहायता करना) - वही इस संस्था कार्य का एकमात्र लक्ष्य है।

वेदांत भास्कर संस्था का औपचारिक उद्घाटन जुलाई २०२४ में प.पू स्वामी गोविंददेवगिरि महाराज के आशीर्वाद से होकर कैलिफोर्निया, अमेरिका में उसका विधिवत पंजीकरण हुआ। पूर्वोक्त ध्येय की पूर्ति हेतु, परम कल्याण की प्राप्ति कराने वाले विचार का प्रचार और प्रसार करणे हेतु, सद्गुरु के कार्य को आगे बढ़ाने के उद्देश्य से त्रैमासिक की शुरुआत का निर्णय लिया गया।

इस त्रैमासिक को सद्गुरु प. पू डॉ. श्रीकृष्ण दत्तात्रेय देशमुख (डॉ. काका), एवं प. पू मंदाताई के आशीर्वाद उनके लेखों के रूप में प्राप्त हुए हैं और हमें गहरा विश्वास है कि यह कृपा आनेवाले समय में भी निरंतर बनी रहेगी। 'परमार्थ किसलिए करना चाहिए' - इस शाश्वत प्रश्न का प्रतिबिंब दर्शानेवाले आकर्षक मुखपृष्ठ से यह त्रैमासिक सुसज्जित है। त्रैमासिक तीन भागों में विभाजित है—पहला भाग परमार्थ विषयक लेखों के लिए, दूसरा विशेष रूप से युवाओं और धर्मप्रेरक विचारों के लिए , और तीसरा भाग संस्था कि गतिविधियों को उजागर करता है। उद्देश्य के अनुरूप इसमें उचित परिवर्तन किए जाएंगे।

इस त्रैमासिक अंक की विशेषता है कि पहले अंक से ही यह तीन भाषाओं—मराठी, हिंदी, एवं अंग्रेज़ी में उपलब्ध है। सद्गुरु प.पू काका के मार्गदर्शन अनुसार, संस्था का कार्य सभी भाषा, क्षेत्र, राष्ट्र और आध्यात्मिक संप्रदाय की सीमाओं से ऊपर उठकर शुरू हुआ है। प.पू काका के उपदेश अनुसार 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्' (संपूर्ण विश्व में धर्म की प्रेरणा करें) ये श्रुतीप्रमाण को शिरोधार्य मानकर, एवम् 'जेथे माया स्पर्शो शकेना' (जो माया के स्पर्श से परे है) ऐसे सद्गुरु तत्व को स्वीकार कर, संस्था का कार्य शुरु है।

श्रीगुरुपूर्णिमा के अत्यंत मंगलमय अवसर पर, सद्गुरु प.पू काका एवं प.पू मंदाताई के पावन हाथों से वेदांत भास्कर संस्था के प्रथम त्रैमासिक अंक का प्रकाशन सम्पूर्ण साधक समुदाय के लिए अत्यंत आनंद का क्षण है। इसमें कोई संदेह नहीं कि उनके आशीर्वाद से आरंभ हुआ यह कार्य दीर्घकाल तक चलता रहेगा।

यद्यपि यह त्रैमासिक आकार में छोटा है और अत्यंत कम अवधी में तैयार किया गया है, परंतु इसके हेतु अनेक साधकों की निष्ठापूर्ण सेवा सद्गुरुचरणों में समर्पित हुई है। साधक बंधू-भगिनी ऐसे ही अपने व्यस्त जीवन से समय निकालकर इस सेवाकार्य में अपना योगदान अवश्य देते रहेंगे। हिंदी अनुवाद में सहायता हेतु श्री मिलिंदाजी काळे का विशेष आभार।

॥ जय जय रघुवीर समर्थ ॥

- श्री मंगेश फडके
आषाढ़ शुद्ध पूर्णिमा, शालिवाहन शक १९४७
गुरुवार, १० जुलाई २०२५, श्रीगुरुपूर्णिमा
Bay Area, California, USA

सुखरूपता की खोज

अध्यात्म और जीवन – १

प. पू. डॉ. श्रीकृष्ण दत्तात्रेय देशमुख

मनुष्य का जीवन सार्थक, सफल और यशस्वी हो सके इसके लिए उस जीवन का तीन अंगों के हिसाब से विचार करना पड़ता है। वे तीन अंग हैं चरितार्थ, सुख और सुखरूपता। हर अंग की एक अलग विद्या है। चरितार्थ की विद्या, सुख की विद्या और सुखरूपत्व की विद्या। मनुष्य के मन के विकास की अवस्था के अनुसार व्यक्ति उन विद्याओं का कम या अधिक विचार करता है और उन्हें प्राप्त करने का प्रयत्न करता है। आजकल चरितार्थ की विद्या को आवश्यकता से अधिक महत्त्व प्राप्त हो जाने के कारण मनुष्य का जीवन एकांगी हो जाने का खतरा बढ़ता जा रहा है। कुम्हार या लुहार के चरितार्थ की विद्या उन्हें घर बैठे घर के जेष्ठ व्यक्तियों से मिल जाती है। लेकिन एक परमाणु वैज्ञानिक, डाक्टर या इंजिनियर को विश्वविद्यालय से अत्यंत जटिल विद्या का संपादन करना पड़ता है। कुम्हार या लुहार के लिए विद्या को महत्त्व नहीं है बल्कि चरितार्थ ही प्रमुख बात है। मुझ बात है। उस विद्या से होनेवाला चरितार्थ गौण होता है। अन्न, वस्त्र, घर, शिक्षा, मनोरंजन, आरोग्य, क्रीडा, साहित्य, कीर्ति, सत्ता, कला इसप्रकार इस चरितार्थ के विकास का क्रम है। इन सभी बातों का चरितार्थ में समावेश रहता है और इसकी प्रत्येक बात का शास्त्र है या कहें कि विद्या है। इनमें से हरेक बात अनेक लोगों के चरितार्थ की विद्या हो सकती है। इसका अर्थ यह हुआ कि किसी एक व्यक्ति के चरितार्थ की इच्छा ही कुछ लोगों के चरितार्थ का साधन है। क्या केवल चरितार्थ अच्छीतरह से चलाने में ही जीवन की सफलता, अर्थपूर्णता और यश है? अन्न से लेकर कला तक चरितार्थ के साधन उपलब्ध होने के कारण क्या जीवन सफल हो सकता है? क्या वह जीवन सुखी होता है? इसका स्पष्ट उत्तर है- नहीं।

नूतन मानवीय मन

आजकल के मनुष्य का मन अत्यंत उलझा हुआ है। ऐसा माना जाता है कि मनुष्य अत्यंत बुद्धिमान प्राणी है। मानव वंशशास्त्र के अनुसार इस पृथ्वी पर पहला मानव चरितार्थ की केवल अन्न, वस्त्र और आवास की तीन बातों में उलझा हुआ था। उस मनुष्य में उंच-नीच, गरीब-धनवान, शिक्षित-गंवार, शोषक-शोषित, राजा-प्रजा इत्यादि भेद नहीं थे। भूख, निद्रा, भय, संभोग ये मूलभूत संवेदनाएं और उनकी पूर्ती ही उसका जीवन था। उस समय उसका मन भी बहुत कम उलझा हुआ होना चाहिए।

समूह, समूह का नेता, नेतृत्व की होड़, समूह के अंतर्गत संघर्ष, इलाके के स्वामित्व का झगड़ा आदि बातों तक ही मन के उलझाव को गुंजाइश थी। आज इन सभी बातों को कितने ही नये आयाम प्राप्त हो गए हैं। जाति, धर्म, राष्ट्र, संपत्ति, प्रदेश, नौकर-मालिक संबंध, अपराध, राजनीति, सामाजिक व्यवस्था, प्रतियोगिता, ऊँच-नीच आदि जैसे अनेक कारणों से मनुष्य के मन का उलझाव हजारों गुना बढ़ गया है। समाचारपत्र, लघुकथा, उपन्यास, सिनेमाजगत, क्रीडाजगत, आकाशवाणी, दूरदर्शन इत्यादि माध्यमों के कारण इस उलझाव को एकतरह से अनवरत गतिशीलता प्राप्त हुई है। स्त्री और पुरुष के संबंध, पारिवारिक व्यवस्था अत्यंत उलझनों वाली होती जा रही है। ऐसी परिस्थिति में मनुष्य कैसे सुखी रह सकता है? बढती हुई मनोरोगियों की संख्या, बढती हुई बुरी आदतें और उन्हें प्राप्त प्रतिष्ठा, क़ानून और न्याय व्यवस्था का बढ़ता हुआ अवमूल्यन, बढती हुई असुरक्षा, अपार संपत्ति का बढ़ता हुआ लालच, समाज के प्रति बढती हुई लापरवाही, अभ्यास और परिश्रम की खिल्ली उड़ाना इत्यादि बातों से क्या मनुष्य सुखी हो सकेगा? इसलिए सुखी होने के लिए न्याय, नीति और धर्म की विद्या को सुख की विद्या कहते हैं। चरितार्थ की विद्या से मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति हो कर न्याय आदि की विद्या से सुखी जीवन का कुछ अंशों तक प्रबंध हो सकेगा। न्याय और नीति का वास्तव में 'धर्म' में ही समावेश करने में कोई आपत्ति नहीं है। इसप्रकार का धर्ममय जीवन मनुष्य को सुखी कर सकेगा। परन्तु मनुष्य की वास्तविक उड़ान इससे बहुत अधिक ऊँची है। धर्ममय जीवन की मजबूत नीव पे वह उड़ान भरी जा सकती है। चूँकि धर्म इस लेख का विषय नहीं है अतः उसका यहाँ अधिक विचार नहीं किया है।

सुख की लगन

धर्ममय जीवन से मनुष्य का मन शुद्ध और शांत होने में मदद मिलती है। इस आधार पर सुखमय जीवन की रचना की जा सकती है। सुखमय होकर सुख से जीना और अंत में सुख से शरीर और इस संसार का त्याग करना ही अध्यात्मशास्त्र का एकमेव उद्देश है। मनुष्य जीवन का इसके अलावा और कौन-सा उद्देश हो सकता है? सुख की खोज और दुःख का प्रतिकार की ये प्रवृत्तियाँ सभी को जन्म से ही प्राप्त रहती हैं। ये प्रवृत्तियाँ इतनी सहज होती हैं कि वे हममें हैं इसका ध्यान भी हमें नहीं रहता। 'सुखी रहो' ऐसा आशिर्वाद 'और बाद में वे सुख से रहने लगे' ऐसा कथा का अंत, नायक और नायिका के विवाह के रूप में सिनेमा की सुखान्त समाप्ति ये सभी बातें हमारी सुख की ओर के खिंचाव या आकर्षण की प्रवृत्ति दर्शाती हैं।

यह प्रवृत्ति हम में हमारे जन्म के साथ ही रहती है यह बात थोड़े ही निरीक्षण से हम समझ सकते है। नवजात बच्चे मुख्य रूप से तीन कारणों से रोते हैं और वे हैं भूख, दुःख और अन्धेरा या एकांत। भूख क्यों लगती है? यह सच है कि भूख जीव को जीने के लिए आवश्यक प्राकृतिक प्रेरणा है। लेकिन इस भूख के पीछे किस बात की प्रेरणा है? तो उत्तर है इसके पीछे जीव के अस्तित्व की प्रेरणा है। यह अस्तित्व की प्रेरणा किसकी है? नवजात बच्चा उसका कपड़ा भीगकर ठंडा होने पर रोने लगता है। ठण्ड लगने का दुःख उसे अनिच्छित लगता है। ऐसा क्यों? क्योंकि उस नवजात शिशु के साथ भी सुख की सहज प्रेरणा होती है। यह सुख की प्रेरणा किसकी है? नवजात बच्चा भी दीये की या उस जैसी वस्तु की ओर टुकुर-टुकुर ताकता है, आवाज की आहट लेता है। अन्धेरा होने पर या आवाज की आहट बंद होने पर वह रोने लगता है। यह देखने की और सुनने की प्रेरणा किसकी है? इन दोनों बातों में जो जानने की प्रेरणा है वह उसे किससे प्राप्त होती है? जीवन की इन मूलभूत प्रेरणाओं और अध्यात्मशास्त्र का अत्यंत निकट का संबंध है। भूख की सहज प्रेरणा के पीछे अस्तित्व की प्रेरणा है। सुख की प्रेरणा के पीछे सुखमयता की सहज प्रेरणा है और जानने की प्रेरणा के पीछे ज्ञान की प्रेरणा है। संक्षेप में कहें तो इन सभी प्रेरणाओं का उद्गम सत, चित और आनंद रूप आत्मा है।

अध्यात्मशास्त्र और विज्ञान

यदि अध्यात्मशास्त्र और जीवन इन दोनों का उद्देश एकदूसरे के लिए पूरक है तो मनुष्य के जीवन की सफलता के लिए अध्यात्मशास्त्र उपयोगी होना चाहिए। मनुष्य का जीवन अध्यात्मशास्त्र की प्रयोगशाला है और मनुष्य जीवन का अंतिम ध्येय साध्य करने के लिए अध्यात्मशास्त्र का उपयोग है। इसप्रकार वे आपस में पूरक हैं। आजतक अनेक संत महात्माओं ने अपने जीवन की प्रयोगशाला में अध्यात्मशास्त्र का उपयोग कर जीवन सफल किया है और सबका अपनी अपनी पद्धति से मार्गदर्शन किया है। कुछ लोग सोचते हैं कि अध्यात्मशास्त्र केवल बुद्धिमान, खुशहाल और मुफ्तखोर लोगों की कल्पनाओं का हवाई महल है। जब कि कुछ लोगों को लगता है कि अध्यात्मशास्त्र की पद्धति दरिद्र, निराश और असफल लोगों की लालचवश अपनाई हुई जीवनपद्धति महत्वाकांक्षाहीन है और प्रयत्न और मेहनत करने की इच्छा न रखनेवाले लोगों का बहाना है। पड़ता है कि परमार्थशास्त्र के विषय में ऐसे विचार रखनेवाले और उस शास्त्र का उपयोग करनेवाले इन दोनों ही प्रकार के लोगों ने उस शास्त्र का लगन से अभ्यास करने की थोड़ी-सी भी कोशिश नहीं की है। मुंडक उपनिषद् का प्रश्नकर्ता शौनक "महाशाली" है। वह एक संपन्न परिवार का मुखिया है। गरीबी, निराशा और असफलता से उसका कभी भी सामना नहीं हुआ है। उसने अपने श्रीगुरु से सीधा यह प्रश्न पूछा कि "कस्मिन्नु भगवो विज्ञाते सर्वमिदं विज्ञातं भवतीति।"

अर्थात ऐसा कौन-सा तत्व है कि जिसके जानने पर 'यह, वह, और वे" इसप्रकार से जाना जानेवाला सबकुछ ज्ञात हो जाएगा। जिस पर परमार्थशास्त्र का थोड़ा बहुत भी संस्कार न हुआ हो, उसे इस प्रश्न की संपूर्ण व्याप्ति ध्यान में आना भी कठिन है। इस अनंत ब्रह्मांण्ड के दृश्य विस्तार के अन्दर और उसके बाहर भरा हुआ एक तत्व है- ऐसी विचारकों की बहुत पहले से श्रद्धा बनी हुई है। आधुनिक सच्चे समर्पित वैज्ञानिक उनकी अपनी पद्धति से उस तत्व की खोज करने का भरसक प्रयत्न कर रहे हैं। प्रस्तुत सूक्ष्म कण का पता लगाने के पश्चात उससे आगे भी सूक्ष्म कण होने का अहसास उन्हें है। यह कोई कल्पना का खेल नहीं है वरन सत्यान्वेषण है। मनुष्य की क्षुद्र, वैचारिक और परिस्थिति सापेक्ष मर्यादाओं को पूरीतरह दरकिनार कर यह सत्यान्वेषण चलता आ रहा है और आगे भी चलता रहेगा। सत्य की खोज करते समय वैज्ञानिकों के यह ध्यान में आया है कि खोज का विषय और खोज करनेवाला ये दोनों यदि एक-दूसरे से अलग रहे तो सूक्ष्मातिसूक्ष्म दृश्य तत्वों का सर्वांगीण निरीक्षण एकसाथ नहीं हो सकता। एक को करने पर दूसरा छूट जाता है। दोनों का निरीक्षण एकसाथ करने की कोशिश करने पर दोनों का अधूरा ज्ञान होता है। इसके बाद उन्होंने यह निष्कर्ष निकाला कि निरीक्षणकर्ता जबतक निरीक्षण में अपनेआप को भूल नहीं जाता (he becomes participator and not an observer), उसे अन्वेषण करना संभव ही नहीं होता। इस संपूर्ण विश्व की की इकाइयां परस्पर सहभागी हैं (Participated Universe). परन्तु वैज्ञानिकों ने जो मर्यादाएं निश्चित की हैं, उनके कारण उसके आगे की छलांग या उड़ान वे नहीं ले पा रहे हैं। प्रत्येक प्रमेय प्रत्यक्ष या कहीं भी सिद्ध होना चाहिए और गणितीय भाषा (Mathematical Formation) में उसकी प्रस्तुति करना संभव होना चाहिए – यही वे मर्यादाएं हैं। वैज्ञानिक और वेदान्तिक सत्यान्वेषण के अंतर को बतलाते हुए फ्रिटजाफ काप्रा कहते हैं –"ऋषि ध्यान के मार्ग से सत्य की खोज करते हैं, वहीँ परमाणु वैज्ञानिक प्रयोग और गृहित अनुमान (Hypothesis) के आधार से उसको खोजने की कोशिश करते हैं। ऋषियों को सत्य ज्ञात होता है परन्तु उसकी व्यक्त शाखाएँ, उपशाखाएँ ज्ञात नहीं होती। वहीँ वैज्ञानिकों को व्यक्त शाखाओं और उपशाखाओं का ज्ञान होता है परन्तु उस मूल (सत्य) का पता नहीं चलता। ऋषियों को विज्ञान की आवश्यकता हो न हो, विज्ञान को ऋषियों की जरुरत हो न हो लेकिन मानवजाति को दोनों की आवश्यकता है।"

वेदान्त की दृष्टि से ब्रह्म ही सत्य है। वैज्ञानिकों के मतानुसार उनकी पद्धति से प्राप्त हो सकने वाला सत्य अभी उनके सामर्थ्य की सीमा में नहीं आ सका है। वह जब उन्हें मिले, मिलने दो। लेकिन सुखमय होकर, सुख से जीकर सुख से यह शरीर और संसार छोड़ने के लिए वैदिक सत्य की खोज कर उसका अनुभव लेना संभव है। अब तक अनेक लोग उसकी अनुभूति कर चुके हैं।

अध्यात्मशास्त्र की प्रणाली

वेदान्तशास्त्र ने सत्य की अनुभूति के लिए तत्वज्ञान और साधना की प्रणाली तैयार कर दी है। प्रणाली का अर्थ सत्य नहीं है परन्तु प्रणाली की सहायता से सत्य का अनुभव लेना संभव है। अनुभव लेने के बादअनुभव लेनेवाले के लिए प्रणाली निरुपयोगी या बेकार हो जाती है। स्वयं प्रणाली या पद्धति तैयार करने वालों ने ही ऐसा कहा है :-

अविज्ञाते परे तत्वे शास्त्राधीतिस्तुनिष्फला ।
विज्ञातेऽपि परे तत्वे शास्त्राधीतिस्तु निष्फला॥ (विवेक चूडामणी -६१)

अर्थात ब्रह्म का अनुभव न होने पर शास्त्र का अभ्यास निरर्थक है और उसका अनुभव आने के पश्चात
भी वह निरर्थक ही हो जाता है। इसलिए प्रणाली समझ लेना चाहिए, उसका उपयोग करना चाहिए, उसकी सहायता से ब्रह्मानुभव प्राप्त करना चाहिए और फिर उस प्रणाली को भूल जाना चाहिए। प्रणाली पर किये हुए इस भरोसे या विश्वास को ही श्रद्धा कहते हैं। व्यावहारिक स्तर पर हम ऐसी श्रद्धा रखते हैं और उस समय प्रत्येक प्रणाली चुपचाप केवल किसी पदवी या डिग्री के प्रमाणपत्र पर भरोसा रखकर स्वीकार करते हैं। उदाहरण स्वरुप यदि कोई रोगी अपना एक्स-रे निकालने के लिए किसी रेडियोलोजिस्ट के पास जाता है तो वह, जिस भी यंत्र के सामने खडा रहने को कहा जाता है, उसके सामने खडा हो जाता है और अपना एक्स-रे निकलवाता है। उस यंत्र प्रणाली की स्वयं जांच करने की जिज्ञासा भी उसके मन में नहीं जागती। वह उसे दिए गए एक्स-रे फोटो और उसके हिसाब से रेडियोलोजिस्ट के दिए हुए निष्कर्ष और उस यंत्र पर जो उस प्रणाली के अंग हैं उन्हें पूरी श्रद्धा से स्वीकार करता है। रोगी को डाक्टर की नामपट्टिका पर लिखी हुई उसकी डिग्री, एक्स-रे मशीन, उसे दिया हुआ एक्स-रे फोटो और डाक्टर द्वारा दी गई रिपोर्ट पर कोई शंका नहीं होती। उसे पूरी प्रणाली स्वीकार्य होती है। इसीप्रकार अध्यात्मशास्त्र की प्रणाली पूरी श्रद्धा से स्वीकार करने पर और उसके अनुसार साधना करने पर आनंदमय जीवन का अनुभव हो सकेगा। व्यवहार में जिसतरह नकली डाक्टर या वैद्य घातक सिद्ध हो सकते हैं, उसीतरह अध्यात्मशास्त्र में प्रणाली का दुरुपयोग घातक होता है। एक्स-रे निकालने के लिए एक्स-रे किरणों का सिद्धांत सीखना नहीं पड़ता परन्तु अध्यात्मशास्त्र के सैद्धांतिक पक्ष को समझना पड़ता है। यह अंतर ध्यान में रखना चाहिए। किन्तु अध्यात्मशास्त्र के परिणामों पर एक्स-रे की प्रणाली की भाँति ही संपूर्ण विश्वास रखना ही पड़ता है।

सत् -चित् - आनंद

हमने पहले देखा कि सत् -चित् - आनंद स्वरुप आत्मा की प्रेरणा से जीव की अस्तित्व, ज्ञान और सुख की ओर प्रवृत्ति होती है। आत्मस्वरूप ब्रह्म शरीर, जगत और जगत के बाहर भी अपरंपार व्याप्त है और सच्चिदानंद उसका स्वरुप है। यह एक गृहित अनुमान (Hypothesis) है। यह श्रद्धा का अत्यंत महत्वपूर्ण विषय है। उपनिषद का यह वचन यही बतलाता है :-

"अस्तित्येवोपलब्धव्यस्तत्वभावेन चोभयो ।
अस्तित्येवोपलब्धस्य तत्वभावः प्रसीदति ॥" (कठ. २-३-१३)

अर्थात : 'ब्रह्म है' ऐसी श्रद्धा होनी चाहिए। उसके पश्चात वह जैसा है वैसा उसका अनुभव लेना चाहिए। इसतरह दोनों प्रकार से जो उसे स्वीकार करता है उसे ब्रह्मतत्व के अनुभव का प्रसाद प्राप्त होता है। मुंडकोपनिषद में शौनक ने पूछे हुए प्रश्न का उत्तर भी इसी में समाविष्ट है। ब्रह्म ही एक ऐसा तत्व है जिसके जानने पर सबकुछ जानने जैसा होता है। वह तत्व सच्चिदानंद है। "सत् एव सोम्य इदमग्रे आसीत्" (छान्दोग्य. ६-२-१) पहले केवल सतरूप ब्रह्म ही था। इस सत से आगे मूलमाया-गुणमाया-जडमाया इसी क्रम से 'अस्ति' ऐसा अस्तित्वसूचक शब्द तैयार हुआ। जड़ और चेतन पदार्थों का अस्तित्व अर्थात 'अस्ति'। यह अस्तित्व जिसे ज्ञात होता है वह प्रमाता होता है। उसे वह पदार्थ अस्तित्व के कारण ज्ञात होता है। इस ज्ञात होने को 'भाति' कहते हैं। आत्मा के 'चित' अर्थात ज्ञान स्वभाव के कारण जीव को 'भाति' अर्थात ज्ञात होता है। (प्रमाता = देखनेवाला = जीवात्मा) अस्ति रूप से रहनेवाले और भाति रूप से ज्ञात होनेवाले पदार्थ के विषय में अनुकूल प्रतिक्रिया होने पर उस पदार्थ को या व्यक्ति को प्रियत्व प्राप्त होता है अर्थात वह प्रिय लगता है। यह प्रियत्व आत्मा के आनंद रूप के कारण मिलता है। आत्मा आनंदरूप है इसीकारण प्रियत्व रूप से सुख का अनुभव होता है। अस्तित्व, भातित्व और प्रियत्व मानव जीवन के प्रमुख अंग हैं। समस्त मानव जीवन पर उनका होने वाला गंभीर परिणाम और उसका अध्यात्म के साथ संबंध का अध्ययन अत्यंत बोधप्रद है। अस्तित्व, ज्ञान और सुख की इन प्रेरणाओं के प्रकृति, विकृति और संस्कृति इसप्रकार तीन भाग किये जा सकते हैं। जियें, नजर आयें, प्रसिद्ध हो जायें, चारों ओर अपना प्रभाव हो, सम्मान हो, इसप्रकार से मनुष्य के जीवन में अस्तित्व की प्रेरणा व्यक्त होती है। इनमें जीने की इच्छा प्रकृति है, न्याय नीति, धर्म, अध्यात्म, कला, साहित्य आदि के साथ सफल जीवन जीने की इच्छा संस्कृति और संसार को ठगकर, मुफ्तखोरी कर सुख नोचनेवाला जीवन विकृति है। पूरे शरीर में व्याप्त सतरूप आत्मा के अस्तित्व की प्रेरणा के कारण जीने की इच्छा होना स्वाभाविक है।

आत्मा की व्यापकता के कारण प्रसिद्धि की अपेक्षा होना प्राकृतिक है। लेकिन इस प्रकृति को मनुष्य संस्कृति का योगदान करे ऐसी अपेक्षा है। अपने अस्तित्व को बचाने के लिए दूसरे के अस्तित्व को समाप्त करना विकृति की सीमा है। अन्य लोगों का अस्तित्व सह नहीं पाना और उसका द्वेष करना खराब विकृति है। अन्य लोगों के अस्तित्व में दिक्कतें पैदा करना और उसमें सुख मानना खल या नीच पुरुषों की विकृति है। साथ ही अन्य लोगों की असुविधा का, दिक्कतों का विचार भी न करना पाशविक विकृति है। **वैष्णव जन तो तेणें कहिये जे पीड पराई जाणे रे।**
पर दुखे उपकार करे तो ये मन अभिमान न आणे रे ॥
अस्तित्व की प्रेरणा का परिणाम यदि विकृत रूप में सामने आता है तो उसके आगे होनेवाले परिणाम सभी को नजर आते हैं। पर्यटन के लिए निकले विद्यार्थी दर्शनीय या ऐतिहासिक स्थानों पर दीवारों पर अपने नाम लिखते हैं या कुरेद देते हैं। अपना अस्तित्व लोगों के ध्यान में आये यही सुप्त उद्देश इसके पीछे रहता है। राज्यपरिवहन की बसों की सीटें, बाग-बगीचों की बेंचें, शौचालयों की दीवारें भी इससे अछूती नहीं रहतीं। अखबारों में नाम आये, रेडियो पर फ़र्माइशी कार्यक्रम में अपने नाम की घोषणा हो जिसे सब सुन पायें, दूरदर्शन पर अपना चित्र दिखाई दे, अलग- अलग उत्सवों में समारोहों में अपना फोटो निकाला जाए ऐसी सारी इच्छाएं अस्तित्व की प्रेरणा से उत्पन्न होती हैं। हमें पहचाना जाए, हम सबकी नज़रों में आयें, हमारा नाम झलकता रहे, हमारा प्रभाव रहे, हमारी मूर्तियाँ खड़ी की जायें, फोटो लगाए जायें इत्यादि सुप्त या प्रकट इच्छाएं सभी व्यक्तियों को होती हैं।

उनके कारण होने वाले रूठने, दुखी होने, बेचैन होने की बातें चारों ओर देखने में आती है।इसके विपरीत संत ज्ञानेश्वर कहते हैं कि "कोई उसे बड़ा या श्रेष्ठ न कहे इसलिए स्वस्वरूप जान लेने वाले ज्ञानी पुरुष अज्ञान की चादर ओढ़ लेते हैं।" यह है आध्यात्मिक संस्कृति! इस संस्कृति के बारे में जो ख़ास बात है वह यह कि महान व्यक्तियों की महत्ता, उनकी श्रेष्ठता हजारों साल लोगों के मानस में बनी रहती है। अस्तित्व की विकृत प्रेरणा नष्ट करना, सहज प्रेरणा बाधित करना और समाज के लिए उस प्रेरणा का उदात्तिकरण कर लोकसंग्रह करना, लोगों को जोड़ना अध्यात्मशास्त्र के उद्देश हैं। समाज का जीवन सुखी रहे इसके लिए क्या यह आवश्यक नहीं है? हमने देखा कि यह प्रेरणा सच्चिदानंद आत्मा के 'सत' से मिलती है और वह देह, मन और जगत के आधार से बनी रहती है। ये तीनों मिथ्या हैं और प्रेरणा का उद्गम सत्य है। यह बात ध्यान में आने के समय और वह उद्गम 'मैं' हूँ ऐसा अनुभव आने पर इन प्रेरणाओं के पीछे भागते रहने का कोई कारण नहीं रहता। अध्यात्मशास्त्र का यही मर्म है। यह साध्य होने के कारण ही संत ज्ञानेश्वर ने भरी जवानी में ही संसार को त्याग दिया। संत तुकाराम आनंद के साथ यह कहते हुए संसार से विदा हुए कि "**आम्ही जातो अमुच्या गावा । अमुचा राम राम तुम्ही घ्यावा ॥** " अर्थात मैं अपने गाँव (परमधाम) जा रहा हूँ, आप सबको मेरी राम राम। अविद्या के कारण "इस शरीर और मन के रूप में "मैं" और यह दृश्यजगत सत्य है" ऐसा भ्रम जबतक जीव को है तबतक अस्तित्व की प्रेरणा का पीछा करना चलता रहता है। शरीर के रूप में 'मैं' और जगत के रूप में "मेरा" किसप्रकार सत्य नहीं वरन मिथ्या हैं और इन दोनों में व्याप्त ब्रह्म किसतरह सत्य है, यह समझने के लिए वेदान्तशास्त्र की समस्त प्रणालियाँ (systems) उपयोगी होती हैं और काम आती हैं।

लेखक का परिचय:

प. पू. डॉ. श्रीकृष्ण दत्तात्रेय देशमुख (अर्थात डॉ. काका) - मुरगुड, कोल्हापुर, भारत

प. पू. काका व्यवसाय से डॉक्टर हैं। महाराष्ट्र के मुरगुड तालुका में उन्होंने अनेक वर्षों तक चिकित्सक के रूप में दिन-रात रोगियों की सेवा की है। जीवन के बावनवें वर्ष में, सभी पारिवारिक जिम्मेदारियाँ सफलतापूर्वक निभाने के बाद, उन्होंने अपने चिकित्सा व्यवसाय से निवृत्ति लेकर शेष जीवन सामाजिक और आध्यात्मिक जागरूकता के दिव्य कार्य को समर्पित कर दिया। उन्होंने प्राप्त ज्ञान को आज की भाषा में लोगों तक पहुँचाने का कार्य प्रवचन, ग्रंथ और लेखों के माध्यम से अत्यंत प्रभावी ढंग से किया। यही कार्य "शिवगड अध्यात्म ट्रस्ट, मुरगुड" और "वेदांतभास्कर, अमेरिका" जैसी आध्यात्मिक संस्थाओं के माध्यम से निरंतर जारी है।

वेदांत भास्कर उपक्रम की जानकारी

बालसंस्कार वर्ग

इस वर्ग में बच्चों को धार्मिक और सांस्कृतिक शिक्षा देने पर विशेष जोर दिया जाता है। श्रीमद् आदि शंकराचार्य द्वारा रचित स्तोत्र, भगवद्गीता, रामरक्षा, मारुति स्तोत्र आदि का नियमित पाठ कराया जाता है और सरल भाषा में मार्गदर्शन दिया जाता है। सूर्यनमस्कार, योगासन, त्योहारों का वैज्ञानिक महत्व, गौमाता का महत्व, पारंपरिक पहनावा और अभिजात मराठी भाषा को भी पाठ्यक्रम में शामिल किया गया है

संपर्क: ContactUs@vedantbhaskar.org

यदि परमार्थ नहीं किया तो क्या होता है?

प. पू. मंदाताई गंधे

१. संतश्रेष्ठ तुकाराम महाराज बतलाते हैं कि "अहर्निशी सदा परमार्थ करावा। पाय न ठेवावा आडमार्गी ॥" अर्थात दिनरात सदा परमार्थ करो । प्रपंच में ना पाँव धरो । इसका अर्थ हुआ कि प्रपंच के क्रियाकलापों में व्यस्तता न रखते हुए निरंतर परमार्थ करते रहो।

२. इससे अधिक सौम्यता से समर्थ स्वामी रामदास कहते हैं –" प्रपंच सुखे करावा । काही तरी परमार्थ वाढवावा । परि परमार्थ अवघाची बुडवावा । हे विहित नव्हे ॥ "। इस ओवी (मराठी भाषा के छंद) में वे कह रहे हैं कि प्रपंच सुख से करो, परन्तु परमार्थ में भी कुछ उन्नति करते रहो। परमार्थ का सर्वथा त्याग विहित कर्म नहीं है।

३. उपरोक्त कथन के अनुसार दोनों ही महान संत मनुष्यों को बतला रहे हैं कि परमार्थ करो। संत तुकाराम तो कहते हैं कि प्रपंच करो ही मत। सांसारिकों की दुर्बलता को ध्यान में रखकर समर्थ रामदास स्वामी अपने कथन में उन्हें थोड़ी छूट दे देते हैं। वे कहते हैं कि प्रपंच की खातिर परमार्थ बिलकुल करना ही नहीं ऐसा मत करो। परन्तु दोनों का आशय एक ही है।

४. वे ऐसा उपदेश क्यों करते हैं ? उत्तर आसान है कि केवल प्रपंच करने में सिर्फ दुःख का ही अनुभव होता है। दुःख तो किसी को नहीं चाहिए। संत तुकाराम का वचन है कि " संसाराच्या अंगी अवघीच व्यसने !" अर्थात संसारिकों के साथ सभी व्यसन लगे हुए हैं। यहाँ व्यसन का अर्थ है संकट, दुःख। ऐसा दुःख परमार्थ में नहीं है। वे आगे कहते हैं कि "आम्ही या कीर्तने सुखी झालो ॥ " अर्थात मैं कीर्तन में रमकर सुखी हो गया। कीर्तन का मतलब है परमार्थ। हम लोगों का भी अनुभव संत तुकारामजी के अनुभव जैसा ही है।

५. इसी उपदेश का अब हम कुछ अधिक स्पष्टीकरण देखते हैं। परम अर्थ अर्थात श्रेष्ठ प्रकार का प्राप्तव्य। ऐसी बात जो कि शाश्वत सुख देती है। परम हित करती है। ऐसी बात ईश्वर का चिंतन है। इसलिए परमार्थ का स्वरुप ईश्वर का चिंतन है। इसके विपरीत प्रपंच का स्वरुप देह की चिंता का है। चिंतन अर्थात सुखदायी विचार और चिंता का मतलब हुआ फ़िक्र, तनाव, व्यग्रता और बेचैनी जो दुखदायक है। इससे स्पष्ट है कि परमार्थ न करने पर दुःख की परंपरा चलती रहती है। प्रपंच में कुछ भी घटित हो फिर भी आनंद की हानि ही होती है।

६. एक छोटे से गाँव के एक व्यक्ति का पुत्र बड़े शहर में पढ़ाई कर रहा था। उसने अपने पिता को सन्देश भेजा कि 'मुझे चार दिन की छुट्टी है, इसलिए मैं कल शनिवार को गाँव आ रहा हूँ।' बड़े आनंद से शनिवार को निश्चित समय पर वह व्यक्ति अपने पुत्र की राह देखते हुए आँगन में खडा रहा। उस व्यक्ति की एक कन्या भी थी। कुछ ही समय पहले उसका विवाह हुआ था और वह अन्य दूसरे शहर में ससुराल में थी। वह व्यक्ति पुत्र की राह देख ही रहा था कि एक रिक्शा वहां आई। उसने समझा कि पुत्र आया है। परन्तु वह जब आगे बढ़ा तो देखता है कि रिक्शा से उसकी विवाहित बेटी उतरी है और वह अकेली ही है। उसके साथ उसका पती नहीं है। उसे लगा कि ससुराल के लोगों ने बेटी को घर से निकाल दिया है और इसीलिये वह मायके आई है। उसका कलेजा पानी पानी हो गया। कुछ सम्हलकर उसने बेटी से पूछताछ की तो पता लगा कि दामादजी दो दिन बाद आनेवाले हैं। यह सुनकर उसका कलेजा कुछ ठंडा हुआ और उसे कुछ चैन मिला। अभी तक पुत्र नहीं आया था इसलिए वह बेचैन होकर आँगन में चक्कर लगाने लगा। उसे लगा कि शायद बेटे के साथ कुछ बुरा हुआ होगा और वह वियोग के दुःख से परेशान हो गया। उसके कुछ समय पश्चात ही पुत्र आया और उसने बताया कि उसकी गाडी एक घंटा लेट थी। यह कहानी बतलाती है कि बेटी के आने का दुःख और बेटे के न आने के दुःख का यही अर्थ है कि कोई भी प्रपंच की घटना दुखद ही है। वह यदि भगवान का चिंतन कर शान्ति, संतोष अर्जित कर लेता और थोड़ा विवेक कर लेता तो प्रत्येक समय वह निर्विकार और सुखी रह सकता था। माउली संत ज्ञानेश्वर का एक वचन है जिसमें वे कहते हैं – " तोंवरी तोंवरी बाधे हा संसार ! बापरखुमादेवीवर देखिला नाहीं रे बाप ॥" अर्थात जबतक हमें भगवान विठ्ठल की लगन नहीं लगती, तबतक ही यह संसार दुःख या कष्ट देता है । यह वचन पूर्णतः सत्य है।

७. एक और कहानी – आलंदी नगर में संत ज्ञानेश्वर महाराज की यात्रा का समय निकट आ गया था। आलंदी की नगरपालिका की सीमा पर यात्राकर वसूली के लिए नाका बनाया गया था। हर गाँव से यात्री अपना सामान लेकर आलंदी की ओर चल पड़े थे। एक बूढ़ी दादी भी यात्रा पर निकली थी। उसके साथ उसके सामान की एक गठरी थी। उस बोझे को लेकर उसे चलना कठिन हो रहा था। यात्रा में एक युवक भी जा रहा था। उसे दादीजी पर तरस आ गया। उसने दादी से कहा –"दादी मैं भी आलंदी को ही जा रहा हूँ। तुम्हारी गठरी मुझे दे दो। तुम आराम से चलो। मैं तेजी से चलकर आगे जाता हूँ और नाके पर तुम्हारे आने की राह देखता हूँ। तुम्हारे आने पर तुम्हें गठरी सौंप दूंगा।" बूढी दादी खुशी से तैयार हो गई। युवक आगे बढ़ा और नाके पर पहुंचा। अब नाके के अधिकारी ने उस युवक से कहा कि यात्राकर के दो रुपते जमा करो। युवक ने दो रुपये जमा कर दिए।अधिकारी ने उससे फिर कहा 'यह गठरी किसकी है ?' युवक ने कहा ' मेरी ही है। दूसरे की कैसे होगी?' तब अधिकारी ने युवक से कहा- ' इस सामान के भी दो रुपये जमा करो। युवक ने कहा – 'मैं नहीं जमा करूंगा।' तो फिर अधिकारी ने उससे कहा – 'तब तो तुम यात्रा में नहीं जा सकते।' युवक को लगा कि गठरी उसकी न होते हुए वह उसका कर क्यों जमा करे। लेकिन यदि गठरी मेरी नहीं है ऐसा कहा तो मुझ पर चोरी का इल्जाम आयेगा और न कहूं तो उसका यात्राकर देना पडेगा। बड़ी समस्या हो गई। उसने कर जमा नहीं किया तो वह बिना कर दिए भाग न जाए इसलिए अधिकारी में उसे नाके के एक कमरे में बंद कर दिया। कुछ समय बाद दादी नाके पर पहुँची। युवक ने अधिकारी से कहा कि गठरी मेरी नहीं बल्कि दादी की है।

अधिकारी ने युवक को तुरंत छोड़ दिया और दादी से पैसे वसूल कर लिये। विशाल जगत के विस्तार में किसी भी पदार्थ को 'इदं मम' कहते ही बंधन आ जाता है। परिणामतः पुनर्जन्म और दुःख की परंपरा पीछे लग जाती है क्योंकि 'मम' कुछ भी नहीं है। संत तुकाराम महाराज अपने एक अभंग (कविता का एक प्रकार) में कहते हैं - " देह हे देवाचे । धन कुबेराचे । तेथे मानवाचे काय आहे ॥" अर्थात यह देह तो ईश्वर का है, ईश्वर प्रदत्त है और धन तो कुबेर का है। संसार में मनुष्य का क्या है अर्थात कुछ भी नहीं है। इसके विपरीत जगत के सभी विषयों के प्रति 'इदं न मम' बुद्धि से अनासक्त होकर रहना मुक्ति का साधन है। आसक्ति बंधन का कारण है। आसक्त रहना प्रपंच है, अनासक्त रहना परमार्थ है। अतः यह स्पष्ट है कि मुक्त कर मनुष्य को शाश्वत सुख देनेवाला परमार्थ न करने पर वह आसक्त मनुष्य 'दुःखभाग भवेत्', ।

८. नदी के पाट में कुछ स्थानों पर छोटी-बडी चट्टानें होती हैं। उसीतरह छोटे -बड़े गड्ढे और दह भी होते हैं। नदी का प्रवाह बहते हुए आता है तो वह इन गड्ढों को भरते हुए आगे बढ़ता है। परन्तु बीच में ही जब बड़ी चट्टान आ जाती है तो वहां प्रवाह दो भागों में बंट जाता है, उसकी दो धाराएं बन जाती है और वे चट्टान को टालते हुए उसकी बाजू से आगे बढ़ जाती हैं। चट्टान इतने सारे पानी में भी सूखी ही रह जाती है ! श्रीगुरु की कृपा का प्रवाह, उनके दयावान और कृपावान होने के कारण, निरंतर बहते ही रहता है।नदी के पाट के गड्ढों की भांति जो साधक नम्र होते हैं, वे उनके कृपाजल से सराबोर हो जाते हैं, तृप्त होते हैं। परन्तु ऊंची चट्टानों की भांति जो ढीठ बने अहंकार से सर ऊँचा रखकर उद्दंडता से अविनीत बर्ताव करते हैं उन्हें टालते हुए कृपाप्रवाह आगे बढ़ जाता है। उन अहंकारियों की फजीहत होती है, दुर्दशा होती है। वे ऐश्वर्यहीन रहते हैं। संत जनाबाई कहती हैं - नम्र झाला भूतां । तेणें कोंडिले अनंता ॥ अर्थात जिसने नम्रता नामक गुण को अपना लिया है उसने अनंत स्वरुप ईश्वर हो अपने हृदय में बंद कर लिया है अर्थात ईश्वर उसे अपना लेते हैं। न केवल संत और सद्गुरु बल्कि जगत के सामने अहंकार का, घमंड का, उद्दंडता का आचरण भी प्रपंच है और इन सबके सम्मुख निरहंकारी आचरण करना ही परमार्थ है। ऐसा परमार्थ न करनेवालों के भाग्य में ऐश्वर्यहीनता और उसके परिणामस्वरुप दुःख ही आता है। इसका ही अर्थ है कि सुख का साधन परमार्थ ही है। "न चेदिहावेदीन्महती विनष्टीः।" (केन् खंड २ श्रुति ५) - यदि आत्मा को न जाना तो बहुत बडी हानि है। जन्म-मरण की परंपरा का खंडित न होना और इसलिए दुःखपरंपरा का चलते रहना इस बड़ी हानि का स्वरुप है। आत्मा को जानना परमार्थ है। अतः इससे यह भलीभांति ध्यान में आयेगा कि परमार्थ न करने का परिणाम क्या होता है।

केवल प्रपंच के द्वारा सुखी होने की इच्छा करनेवाला मृगजल से बागबगीचे लगाने का वह सपना देखता रहता है, जो कभी भी हकीकत/वास्तविकता में नहीं उतर सकता।

॥ इति शम् ॥

लेखक का परिचय:

प. पू. मंदाकिनी गंधे (अर्थात मंदाताई) – अमरावती, भारत

परम पूज्य मंदाताई जी व्यवसाय से गणित की शिक्षिका हैं और उन्होंने महाराष्ट्र गणित शिक्षा महामंडल में वरिष्ठ सदस्य के रूप में कार्य किया है। सेवानिवृत्ति के बाद, उन्होंने अपना संपूर्ण जीवन अद्वैत वेदांत के कार्य और सेवा को समर्पित कर दिया। वर्तमान में वे श्रीगोपालकृष्ण मंदिर, अंबापेठ, अमरावती की मुख्य संचालिका हैं। पूज्य मंदाताई को कठिन वेदांत की अवधारणाओं को सरल और सहज भाषा में समझाने की दुर्लभ क्षमता प्राप्त है। उन्होंने भारत सहित विदेशों में भी विभिन्न विषयों पर प्रवचन दिए हैं। इसके अतिरिक्त, उन्होंने अनेक भक्तिपर काव्य और भजन भी रचे हैं। परम पूज्य मंदाताई अमेरिका स्थित वेदांतभास्कर संस्था की प्रेरणास्थान हैं। उनके मार्गदर्शन में संस्था द्वारा विविध आध्यात्मिक उपक्रम और कार्यक्रम आयोजित किए जाते हैं।

वेदांत भास्कर उपक्रम की जानकारी

श्रीगणपती अथर्वशीर्ष सामूहिक उपासना

छोटे बच्चे, युवा पीढ़ी और उनके माता-पिता को महीने में कम से कम एक बार एकत्र होकर सामूहिक उपासना करनी चाहिए। हमें अपने मंदिर अवश्य देखने चाहिए और वहाँ सेवा भी करनी चाहिए। इसी उद्देश्य से, हर महीने की संकष्टी चतुर्थी को सैन होजे स्थित प्रसन्न गणेश मंदिर में सभी परिवार सहित एकत्र होकर श्रीगणपती अथर्वशीर्ष का पाठ करना—यह उपक्रम परम पूज्य मंगेशदादा ने प्रारंभ किया है।

अगली मासिक उपासना:

१४ जुलाई २०२५, १२ अगस्त २०२५ (अंगारकी चतुर्थी) , १० सितंबर २०२५.

स्थान: Sri Prasanna Ganapathi Temple, 3102 Landess Ave, San Jose, CA 95132

संपर्क: ContactUs@vedantbhaskar.org

अध्यात्म और विज्ञान

पू. श्री. मंगेश फडके

एक बड़ी -सी नगरी थी। वहां एक राजा राज करता था। वह राजा बड़ा दयालू और निष्पक्ष स्वभाव का था। सारी प्रजा मानों उसकी संतान ही थीं। यह राजा जो कि संपूर्ण ब्रह्माण्ड में सबसे शक्तिशाली था, साथ ही वह ज्ञान , यशश्री, ऐश्वर्य, संपत्ति, औदार्य और वैराग्य ऐसे छह गुणों से अलंकृत था। ऐसे इस सर्वज्ञानी, सर्वशक्तिमान और सर्वसाक्षी राजा का नाम था 'ईश्वर'! उसकी एक विदुषी पत्नी थी। उसका नाम था 'माया'! राज्य का संपूर्ण प्रशासन राजा ने निश्चित किये हुए नियमों के अनुसार चला करता था। परन्तु राजा मूलतः ही विरक्त रहने के कारण वह राज्य के प्रशासन के प्रति 'बेखबर' रहता था। दैनंदिन का कामकाज रानी अर्थात माया के अधीन चला करता था। इस राजा का एक अत्यंत करीबी और विश्वासी प्रधान था। उस अत्यंत सत्वगुणसंपन्न, आत्मज्ञानी और क्षमाशील प्रधान का नाम था 'सद्गुरु'! राजा जितना ही सर्वगुणसंपन्न यह प्रधान, प्रजा के लिए मानों दूसरा राजा ही था ! इन राजा-रानी के तीन पुत्र और एक कन्या थी। उनके नाम थे 'धर्म', 'अध्यात्म', 'विज्ञान' और 'संस्कृति'। इन बच्चों में सबसे छोटा पुत्र था 'विज्ञान'। सबसे छोटा होने के कारण उसकी माता अर्थात माया का उसके प्रति बहुत लगाव था। अत्यंत लाडप्यार ने विज्ञान को बहुत उद्दंड, धृष्ट और विद्रोही प्रवृत्ति का बना दिया था। पिता के बनाए गए नियम उसे बड़े कष्टदायी लगते थे। प्रधान की सलाह को भी वह नजरअंदाज कर देता था। माता के समर्थन के कारण वह दिनोंदिन कुछ ज्यादा ही अकड दिखाने लगा था। अपने भाई-बहन के साथ भी उसकी बनती नहीं थी। 'धर्म' और 'संस्कृति' का मूलतः ही शांत स्वरूप था। वे राजीखुशी से रहते थे। 'विज्ञान'और 'अध्यात्म' के स्वभाव में जिज्ञासू वृत्ति थी। प्रत्येक बात की गहराई में गए बिना, उसकी पृष्ठभूमि की कारणपरंपरा को जाने बिना उन्हें संतोष नहीं होता था।

बच्चे बड़े हो जाने पर एक दिन राजा ने अर्थात ईश्वर ने उन्हें उनके पितामह अर्थात दादाजी के बारे में बतलाया। बच्चों को अपने पिता की योग्यता और पराक्रम के बारे में भलीभांति ज्ञात था। उनसे भी अधिक पराक्रमी रहनेवाले उनके दादाजी का नाम था 'ब्रह्म' ! 'शुद्ध', 'बुद्ध', 'मुक्त', 'विमल', 'निष्कल', 'शांत', 'सत् घन', 'चित् घन', 'आनंद घन' ऐसा दादाजी का वर्णन सुनकर अध्यात्म को अपने दादाजी से मिलने की तीव्र इच्छा उत्पन्न हुई। अध्यात्म ने कहा कि मुझे भी उनके जैसा सत् रूप, ज्ञानरूप और आनंदरूप होना है। विज्ञान ने कहा कि मुझे भी ज्ञान और सुख की प्राप्ति की इच्छा है। परन्तु उसके लिए मुझे दादाजी के पास जाने की आवश्यकता नहीं है। मैं अपने सामर्थ्य के बल पर इन बातों को प्राप्त करूंगा।

दोनों की इच्छा सुनकर राजा को अर्थात ईश्वर को बहुत आनंद हुआ। परन्तु रानी इसका विरोध कर रही थी। लेकिन वह राजा की आज्ञा के बाहर नहीं थी। राजा ने आगे की सारी जिम्मेदारी प्रधान अर्थात सद्गुरु को सौंप दी। राजा के सामने और प्रधान के भी सामने रानी की कुछ ख़ास चलती नहीं थी। विज्ञान ने पहले ही अपना मार्ग निश्चित कर लिया था। उसे किसी की सलाह की जरुरत नहीं थी। माता से रजोगुण की घुट्टी पिए हुए विज्ञान का आलोचक और अहंकारी स्वभाव उसे किसी पर भी 'श्रद्धा' रखने नहीं दे रहा था। लेकिन 'अध्यात्म' ने माता से प्रचुर मात्रा में सत्वगुण प्राप्त किया था। उसकारण उसकी बुद्धि तर्कयुक्त और जिज्ञासु होते हुए भी श्रद्धावान थी। उसने प्रधान अर्थात सद्गुरु के चरणों में बैठकर एकाग्रता से दादाजी के पास जाने का मार्ग समझ लिया। उन 'आप्त' ने मार्ग का अता-पता, आनेवाली रुकावटें और खतरे समझाकर बतलाये। उन्होंने वेगवान गति से प्रवास के लिए एक अत्यंत दैवी रथ भी प्रदान किया। उस रथ के एक चक्के पर लिखा था 'नाम', वहीं दूसरे चक्के पर लिखा था 'ध्यान'। उस रथ में 'सोहं' नामक एक सफ़ेद ,शक्तिशाली और अत्यंत वेगवान घोड़ा जुता हुआ था। अंत में योग्य दिशा में मार्गक्रमण होने के लिए और मार्ग से भटक न जाए इसलिए स्वयं राजा ने ही तैयार किया हुआ नक्शा भी उसके हाथों सौंप दिया। नक़्शे का शीर्षक था 'उपनिषद्'। उस नक़्शे को भलिभांति पढ़ सकें इसके लिए साथ में एक ग्रन्थ भी दिया।

दोनों की इच्छा सुनकर राजा को अर्थात ईश्वर को बहुत आनंद हुआ। परन्तु रानी इसका विरोध कर रही थी। लेकिन वह राजा की आज्ञा के बाहर नहीं थी। राजा ने आगे की सारी जिम्मेदारी प्रधान अर्थात सद्गुरु को सौंप दी। राजा के सामने और प्रधान के भी सामने रानी की कुछ ख़ास चलती नहीं थी। विज्ञान ने पहले ही अपना मार्ग निश्चित कर लिया था। उसे किसी की सलाह की जरुरत नहीं थी। माता से रजोगुण की घुट्टी पिए हुए विज्ञान का आलोचक और अहंकारी स्वभाव उसे किसी पर भी 'श्रद्धा' रखने नहीं दे रहा था। लेकिन 'अध्यात्म' ने माता से प्रचुर मात्रा में सत्वगुण प्राप्त किया था। उसकारण उसकी बुद्धि तर्कयुक्त और जिज्ञासु होते हुए भी श्रद्धावान थी। उसने प्रधान अर्थात सद्गुरु के चरणों में बैठकर एकाग्रता से दादाजी के पास जाने का मार्ग समझ लिया। उन 'आप्त' ने मार्ग का अता-पता, आनेवाली रुकावटें और खतरे समझाकर बतलाये। उन्होंने वेगवान गति से प्रवास के लिए एक अत्यंत दैवी रथ भी प्रदान किया। उस रथ के एक चक्के पर लिखा था 'नाम', वहीं दूसरे चक्के पर लिखा था 'ध्यान'। उस रथ में 'सोहं' नामक एक सफ़ेद ,शक्तिशाली और अत्यंत वेगवान घोड़ा जुता हुआ था।

अंत में योग्य दिशा में मार्गक्रमण होने के लिए और मार्ग से भटक न जाए इसलिए स्वयं राजा ने ही तैयार किया हुआ नक्शा भी उसके हाथों सौंप दिया। नक़्शे का शीर्षक था 'उपनिषद्'। उस नक़्शे को भलिभांति पढ़ सकें इसके लिए साथ में एक ग्रन्थ भी दिया। अध्यात्म के द्वारा उसका पहला पृष्ठ खोलने पर उसपर लिखा था 'संतवाणी' और 'सद्गुरुवाणी'! इस प्रकार से अपनी अपनी तैयारी करके विज्ञान 'बहिर्मुखता' के और अध्यात्म 'अंतर्मुखता' के मार्ग से ज्ञान और आनंद की प्राप्ति के लिए मार्गस्थ हुए। इस प्रकार 'अध्यात्म' और 'विज्ञान' की यात्रा के आरंभ की यह कथा सफल और संपूर्ण हुई। पुराण की कथाओं में जिसप्रकार से रूपक प्रस्तुत किया जाता है, उसीप्रकार की है यह रूपक कथा। हमें उसके वाच्यार्थ से उसके लक्षार्थ तक जाना चाहिए। उपरोक्त रूपक में अध्यात्म अंतर्मुखता का और विज्ञान बहिर्मुखता का प्रतीक है। दोनों ही मानवीय प्रवृत्तियाँ ही हैं। मानव जीवन समृद्ध करने के लिए दोनों की आवश्यकता रहती है। दैनंदिन या व्यावहारिक जीवन के लिए, शरीर की देखभाल करने के लिए, प्रारब्ध के भोग ग्रहण करने के लिए ब्रह्मदेव ने हमारी इन्द्रियाँ बहिर्मुख बनाई हैं। परन्तु साथ ही आवश्यक व्यवहार पूरा करने पर अपनी इन्द्रियों को अंतर्मुख करने की क्रियमाण कर्म स्वतंत्रता भी ईश्वर ने (केवल) इस मानवीय जीव को ही प्रदान की है। और इसी ठौर पर केवल एक ही मार्ग का और दोनों मार्ग का अवलंबन करनेवाले, अध्यात्म तथा विज्ञान, आस्तिक तथा नास्तिक,वैराग्य तथा भोग ऐसी परस्पर विरोधी जोडियाँ बन जाती हैं। विज्ञान की संपूर्ण इमारत १) मैं देह हूँ २) जगत सत्य है और ३) मैं कर्ता/भोक्ता हूँ ऐसी इन मूलभूत गृहित बातों पर आधारित है। वहीं अध्यात्म की शुरुआत ही इन तीन बातों को भ्रमात्मक हैं ऐसा कहते हुए होती है। परन्तु साधक को दैनंदिन व्यवहार को सम्हालते हुए साधना करनी होती है, इसलिए उसे मानों एक प्रकार से हवा में ताने गए रस्से पर संतुलन की कसरत ही करना पडती है। उसके लिए ही व्यावहारिक और पारमार्थिक ऐसी दो सत्ताएं प्रस्तुत कर और उनके अपने नियमों को स्वीकार कर जीवन का क्रम जमा लेना पडता है। यहाँ तक कि विज्ञान में भी भौतिकशास्त्र के स्थूलता (खगोलशास्त्र) के नियम और सूक्ष्मता (क्वांटम भौतिकी) के नियम अलग अलग हैं। उन दोनों की एकवाक्यता या दोनों को सर्वसम्मत बनाने के प्रयत्न जो कि प्रसिद्ध शास्त्रज्ञ आईंस्टाइन का सपना था , आज भी चल ही रहा है(String Theory)। केवल विज्ञान का स्वतंत्र रूप से भी यदि विचार किया तो भी शास्त्रज्ञों के दो दल बन जाते हैं। एक दल है कि जो इन्द्रियों के अतीत समस्त बातें बड़े आवेश के साथ नकारता है। वहीं एक दूसरा दल है जो उसकी संभावना को स्वीकार करता है। विज्ञान का सामर्थ्य अत्यंत विशाल है। आजकल तो विज्ञान की अनगिनत नई नई शाखाओं का विस्तार हो चुका है और होता जा रहा है, भौतिकशास्त्र, रसायनशास्त्र, जीवशास्त्र जैसे मूलभूत शास्त्रों से लेकर आधुनिक Embryology, Neuroscience, Astrophysics, Genetics आदि शास्त्रों तक।

परन्तु अध्यात्म के सन्दर्भ में यदि विचार किया जाय तो मानवीय मन के साथ संबद्ध जो विज्ञानशास्त्र है वह और आध्यात्म का तुलनात्मक विचार अधिक युक्तिसंगत सिद्ध होगा। परमार्थ मन का होता है शरीर का नहीं। परमार्थ के नाम पर किये गए प्रत्येक शारीरिक कृति का संबंध अंततः 'मन' के साथ संबद्ध है। विचारों के उद्गमस्थल की दृष्टि से मन का सीधा संबंध रखनेवाला शरीर का अवयव है मानवीय मस्तिष्क। उससे संबंधित विज्ञान का जो शास्त्र है, वह है Neuroscience। इस शास्त्र के बिलकुल अत्याधुनिक सिद्धांत भी परखे जाएँ तो उपरोक्त उल्लेखित शास्त्रज्ञों के दोनों दल स्पष्टता से दृष्टिगत होते हैं। उससे यह भी ध्यान में आता है कि जैसे जैसे आधुनिक विज्ञान सूक्ष्मता की ओर बढ़ रहा है वैसे वैसे उसमें से प्राप्त नवीन ज्ञान, अध्यात्मशास्त्र के सिद्धांत किसप्रकार अंतिम सत्य हैं इस ओर इंगित करता है। कुछ उदाहरण देख लेने पर यह बात अधिक स्पष्ट होगी।

१) Neuroscience विज्ञानशास्त्र का सबसे मूलभूत परन्तु उतना ही वादग्रस्त और शास्त्रज्ञों को दो दलों में बाँट देनेवाला विषय है कि 'मस्तिष्क के कारण चित्त की (विचारों की) उत्पत्ति है या कि चित्त के कारण मस्तिष्क कार्यरत है' (Whether brain creates consciousness or consciousness makes brain function?)। हम जानते हैं कि अध्यात्मशास्त्र इस सन्दर्भ में अत्यंत स्पष्ट मार्गदर्शन करता है। परमार्थशास्त्र हमें बतलाता है कि हरेक के अंतःकरण में ज्ञान करवानेवाला एक तत्व होता है। संत ज्ञानेश्वरजी का पद है कि ' ज्ञातृ ज्ञेया विहिन । जे का नुसधेची ज्ञान।' अर्थात वह जो ज्ञाता और ज्ञेय के बिना केवल ज्ञान है। इस पद में वे जो विद्यमान है ही, उसी ज्ञान के बारे में बतला रहे हैं। उसे ही 'चित्' कहते हैं। उसमें 'होनेवाले' ज्ञान की मिलावट हो जाने पर उसे 'चित्त' कहते हैं। इसका अर्थ है कि ज्ञाता-ज्ञेय-ज्ञान की त्रिपुटी से रहित जो शुद्ध ज्ञान है उसे pure consciousness संबोधित किया जाता है। महत्वपूर्ण बात है कि 'विद्यमान' ज्ञान रहे बिना 'होनेवाला' ज्ञान होना संभव नहीं है। संत ज्ञानेश्वरजी अपने ज्ञानेश्वरी ग्रन्थ के तेरहवें अध्याय में 'विद्यमान' ज्ञान के बारे में कहते हैं –

'जे देखलियाचिसवे । दृश्य द्रष्टा हो आघवे ।
ऐकवट काल्लवे । सामरस्ये ॥ ९३६ ॥
मग तेचि होय ज्ञान । ज्ञाता ज्ञेय हन ।
जेणे गमिजे स्थान । तेहि तेची ॥ ९३७ ॥

अर्थात – जिसे देखते ही दृश्य (जगत) द्रष्टा (देखनेवाला) यह सभी एकता के भाव से एक हो जाते हैं ।(९३६)

फिर उस अभेद स्थिति में वह ज्ञान ब्रह्म ही है, ज्ञाता ब्रह्म ही है, ज्ञेय ब्रह्म ही है और ज्ञान के द्वारा जो मोक्षरूपी स्थान प्राप्त होता है वह भी ब्रह्म ही होता है। (९३७)

मन की स्वप्नावस्था के ज्ञान का भी यही स्पष्टीकरण है। या फिर जागृतावस्था में भी हम प्रत्यक्ष आँख से कोई दृश्य न देखते हुए केवल सुन्दर सूर्यास्त के चित्र

को मन में लाकर उसका आनंद ले सकते हैं। परन्तु इस अनुभव की मस्तिष्क की गतिविधि विज्ञान ने पकड़ ली हैं। विज्ञान का कहना है कि – "No illumination lights up your visual cortex, which is submerged in the same blackness as the rest of the brain. Yet micro volts of electricity pumping ions back and forth along your neurons magically produce a picture full of light, not to mention beauty and a cascade of associations with every sunset you have ever seen." अर्थात संक्षेप में Consciousness makes brain function. आधुनिक शास्त्रज्ञ विज्ञान की सहायता से इन विचारों का पारमार्थिक सत्य केवल उनकी भाषा में बतला रहे हैं।

२) Neuroplasticity के शास्त्र ने अब यह सिद्ध किया है कि मानवीय मस्तिष्क के मज्जातन्तुओं का जाल (Neural Network) जीवन के अंत तक बदल सकता है,बदलता रहता है। इतना ही नहीं बल्कि Neuroजेनेसिस का शास्त्र एक कदम आगे जाकर सिद्ध करता है कि मस्तिष्क में नए neurons भी तैयार होते हैं और वे नई पद्धति का जाल तैयार कर सकते हैं। इसका ही संक्षेप में अर्थ हुआ कि मस्तिष्क कार्य है और उसके पीछे का 'कारण' consciousness अर्थात ही जीवात्मा / भान या प्रतीति है। विज्ञान कहता है, Neuroplasticity is better than mind over matter. It's mind turning into matter as your thoughts create new neural growth. परमार्थ के लिए पूरक रहनेवाला हमारा 'साधनाशास्त्र' तो इसी मूलभूत सिद्धांत पर आधारित है। जो संस्कार वासना के अनुसार हैं उन्हें मिटाकर शास्त्र के अनुसार संस्कारों को हमेशा बनाए रखना, जीवन में घटित होनेवाली घटनाओं के प्रति अपनी प्रतिक्रया सौम्य बनाए रखना, अंतःकरण को धर्मशाला न होने देकर शुभ विचारों के लिए मार्ग बनाए रखना और अशुभ विचार रोककर रखना तथा अंततः जीवन्मुक्ति के पश्चात 'बाधित अनुवृत्ति' के द्वारा जगत की ओर देखने की दृष्टि ही बदल देना – ये सभी पारमार्थिक अवधारणाएँ neural network में बदलाव सूचित करती हैं ऐसा कहने के लिए काफी गुंजाइश या अवसर है। ध्यानावस्था के बारे में हो चुके वैज्ञानिक संशोधन ने यह संशयातीत सिद्ध किया है कि "brain can adapt to spiritual experiences". जीवनभर ध्यानासाधना करनेवालों के मस्तिष्क की गतिविधियों के बारे में विज्ञान कहता है कि "their prefrontal cortex displays heightened activity; the gamma wave activity in their brains has twice the frequency of normal people's. Remarkable things are happening in the monks' neocortex that brain researchers have never seen before". उसके कारण परमार्थ अपनेआप को धोखा देना (self delusion) या अंधश्रद्धा है ऐसा कहनेवालों के दल के शास्त्रज्ञों को यह विज्ञान ने ही दिया हुआ उत्तर है।

वैज्ञानिक सिद्धांत पर आधारित कुछ प्रश्न अब आप सबके विचार के लिए प्रस्तुत करते हैं।

१ . अत्याधुनिक पुंज भौतिकीशास्त्र (Quantum Physics) बतलाता है कि अतिसूक्ष्म स्तर पर कुछ भी निश्चित स्वरुप में नहीं है। मूलकण (elementary particles) सभी दिशाओं में फैले अदृश्य तरंगों के स्वरुप में होते हैं और जब कोई सजीव उनकी ओर देखता है तब देश-काल (space & time)में निश्चित स्थान लेते हैं।

प्रश्न- हमारे संतों ने/ शास्त्र ने किया हुआ माया का जो वर्णन 'सत् विलक्षण, असत् विलक्षण भी क्या यही नहीं है? अपने ज्ञानेश्वरी ग्रन्थ के चौदहवें अध्याय में संत ज्ञानेश्वर कहते हैं –

तेवी लचकलिया दिठी । मग देखणे जे जे उठी । तया नाम सृष्टी । मीचि विये पै गा ॥ ८५ ॥ अर्थात भगवान् कह रहे हैं कि इस सृष्टि को मैं ही क्षेत्रज्ञ के रूप में उत्पन्न करता हूँ। क्षेत्रज्ञ में दृष्टत्व का भ्रम होकर दृष्टि (वृत्तिज्ञान) उत्पन्न होते ही दृश्य की उत्पत्ति होती है।

उपरोक्त दृष्टि-सृष्टि वाद क्या यही वैज्ञानिक अवधारणा को अधोरेखित नहीं करता ? मूलकणों को लागू पडनेवाला नियम, जिसे "Uncertainty principle" के रूप में जाना जाता है, उसका जनक Werner Heisenberg कहता है कि " Not only is the Universe stranger than we think, it is stranger than we can think". क्या यह वाक्य माया के 'अनिर्वचनीयत्व' का प्रतिनिधित्व नहीं करता ?

२. Neuroscience की भाषा में शब्द, स्पर्श,रूप, रस, गंध को Qualia (Latin for Qualities) कहते हैं। ये चित्त में उत्पन्न होते हैं, प्रत्यक्षतः नहीं होते। उसीप्रकार अपने अस्तित्व की प्रतीति, प्रेम की प्रतीति/ अनुभव चित्त में उत्पन्न होता है। प्रसिद्ध ब्रिटिश Neurologist Sir John Eccles कहता है कि "I want you to realize that there exists no color in the natural world, no sound nothing of this kind, no textures, no patterns, no beauty, no scent". Essentially we are the source of qualia(to give meaning to vibrations of light as color). प्रश्न – क्या अध्यात्मशास्त्र का 'अस्ति–भाति–प्रिय' ऐसा मानवीय प्रतीतियों का विश्लेषण, उसके पीछे रहनेवाला सत् –चित्–आनंद तत्व qualia का source स्वयं वह ही हैं ऐसा नहीं बतलाता ?

३. Congitive scientist Donald D. Hoffman ने 'conscious agent' नामक शब्द प्रचलित किया। वह कहता है कि "conscious agent perceives reality through a specific type of nervous system. It doesn't have to be a human nervous system." प्रश्न – परमार्थशास्त्र की जीव नामक अवधारणा क्या यही नहीं बतलाती ? संत ज्ञानेश्वर जी के 'या उपाधीमाजी गुप्त। चैतन्य असे सर्वगत ।
ते तत्वज्ञ संत स्विकारिती ॥

पद में वे कहते हैं – इस जगत में सर्वत्र एक चैतन्य अदृश्य स्वरुप में व्याप्त है। इस तत्व को संत महात्मा जानते हैं और ग्रहण करते हैं। इस पद में बतलाया गया 'चैतन्य' अर्थात जीवात्मा (प्रतीति के रूप में या कूटस्थ) और 'तत्वज्ञ' अर्थात ब्रह्मतत्व का प्रत्यक्ष अनुभव ग्रहण करनेवाले हमारे संत/ ऋषि -मुनि क्या पुरातन काल के शास्त्रज्ञ ही नहीं हैं?

चौदहवें अध्याय में संत ज्ञानेश्वर महाराज कहते हैं –

आता अज्ञानासारिखे । वस्तु आपणपांचि देखे । परी रुपे अनेके । नेणो कोणे ॥ ८३ ॥

इस पद में जैसा कि बतलाया है जीव कर्मानुसार जिन जिन योनियों में देह धारण करता है, वह प्रत्येक देह उसका अपना ही स्वरुप है ऐसा समझता है। उसके कारण जीवात्मा अपनेआप को कितने स्वरुप में देखता है, यह समझ में नहीं आता। विज्ञान जहां समाप्त होता है वहां परमार्थ प्रारंभ होता है। विज्ञान मस्तिष्क के समान (Physical) बातों के आगे जा नहीं सकता। वहीं परमार्थ मन के भी परे जाकर सत्-चित्-आनंद तत्त्व का उहापोह करता है, विचार करता है। परमार्थशास्त्र के अनुसार 'मन' भी जड़ है क्योंकि वह वायुतत्व से बना है और नींद में वह लय हो जाता है। वहीं विज्ञान को अभी मन का पता ही नहीं लगा है। सत्य यही है कि व्यावहारिक जीवन में वैज्ञानिक ज्ञान के मनुष्य जाति पर जो उपकार हैं उन्हें स्वीकार कर, उनका उचित उपयोग कर अपना समस्त चित्त पारमार्थिक उन्नति की ओर प्रवृत्त करना चाहिए। क्योंकि अंत में विज्ञान भी हमें बतलाता है कि "The belief that science deals in empirical facts" यह पुरानी समझ सही नहीं है, बल्कि "In reality science organizes and gives mathematical expression to experiences in consciousness". उसके कारण विज्ञान कितना भी सूक्ष्मता में जाए फिर भी वह Human nervous system की मर्यादा पार कर नहीं सकता। फिर चाहे वह "Higgs Boson" की खोज हो या कि String Theory की। वे मर्यादाएं पार करने के लिए 'विद्यमान' ज्ञान का ही आधार शास्त्रज्ञों को लेना पडेगा। (जिसे Einstein ने Space & Time की खोज करते समय लिया था। उनके द्वारा उसका गणितीय रूपान्तर E= mc2 कुछ कालान्तर में और महत प्रयास के द्वारा हो पाया। वही बात Benzene Ring की और Thomas Edison की है)। इसीलिये Einstein कहता है कि "The most incredible thing isn't the existence of the universe but our awareness of its existence".

'कारण सहित वर्त्तमान सकल दुःख निवृत्ति तथा परमानंद की प्राप्ति' ऐसा जिसका घोषवाक्य है और उसके लिए जीव-ब्रह्म-एकता का उपाय बतलानेवाले परमार्थशास्त्र की ज्ञानेश्वरी ग्रन्थ के तेरहवें अध्याय का पद (ओवी) उधृत कर इस विचार को पूर्ण विराम देते हैं ।

आकारु जेथ सरे । जीवत्व जेथे विरे । द्वैत जेथ नुरे । अद्वय जे ॥ १४४ ॥

अर्थात स्थूल-सूक्ष्म आकार जहां समाप्त हो जाता है, जीवत्व जहां जीर्ण हो जाता है, द्वैत जहां शेष नहीं रहता, जो स्वगत-सजातीय-विजातीय भेद रहित है वह ही परब्रह्म है।

!!! यह चिंतन पुष्प सद्गुरु के चरणों में सादर अर्पण !!!

लेखक का परिचय:

पू. श्री. मंगेश फडके, बे एरिया, कॅलिफोर्निया, अमेरिका

श्री. मंगेश फडके मूल रूप से भारत के विदर्भ क्षेत्र के निवासी हैं। उन्होंने कंप्यूटर साइंस में स्नातक (BE) और मार्केटिंग में एमबीए (MBA) की डिग्री प्राप्त की है। अपने व्यावसायिक जीवन में, उन्होंने अमेरिका की विभिन्न बहुराष्ट्रीय कंपनियों (MNCs) में वरिष्ठ नेतृत्व के पदों पर कार्य किया है। वर्ष २०२२ में सद्गुरुपद प्राप्त होने के बाद, ५० वर्ष की आयु में मंगेश दादा ने वाइस प्रेसिडेंट के पद से सेवानिवृत्ति लेकर, अपने सद्गुरु की कृपा से, अपना सम्पूर्ण जीवन आध्यात्मिक सेवा के मार्ग को समर्पित करने का निर्णय लिया। पू. मंगेश दादा "वेदांत भास्कर, अमेरिका" संस्था के संस्थापक और अध्यक्ष हैं।

वेदांत भास्कर उपक्रम की जानकारी

त्रैमासिक उपासना

दहर तीन महीने में किसी एक भाग्यशाली साधक के घर त्रैमासिक उपासना आयोजित की जाती है। इसकी शुरुआत नामस्मरण से होती है। शांत और गंभीर नामस्मरण से मन शांत होकर उपासना में एकाग्र होने के लिए तैयार होता है। सगुण उपासना, भजन, कीर्तन, स्तोत्र पाठ और तत्वचिंतन—इन सभी अंगों के साथ यह उपासना पूर्ण होती है।

अगली त्रैमासिक उपासना: दि. २६ जुलाई २०२५, Fremont , CA 94555

संपर्क: ContactUs@vedantbhaskar.org

पारमार्थिक संज्ञाएँ

वेदांत शास्त्र पर आधारित लेख पढ़ते समय, संस्कृत की संज्ञाएँ जो रोज़मर्रा के उपयोग में नहीं हैं, उनका अर्थ तुरंत समझ में नहीं आता, ऐसा पाठकों का अनुभव है। शब्द का वेदांत शास्त्र में अर्थ और उसका व्यावहारिक अर्थ इसमें बहुत अंतर होने के कारण भ्रम उत्पन्न होता है। कई बार एक संज्ञा के एक से अधिक अर्थ होते हैं। ऐसे समय में संदर्भ के अनुसार सही अर्थ लेना आवश्यक होता है। इस अंक में पाठकों के लिए, साथ ही प्रवचन सुनने वालों के लिए उपयोगी कुछ संज्ञाएँ दी गई हैं। हमें विश्वास है कि इसका पाठकों को लाभ होगा। यदि आपको अध्ययन में कुछ अन्य संज्ञाएँ समझने में कठिनाई हो तो आप हमें प्रतिक्रिया में सूचित कर सकते हैं ताकि समय के साथ उनके अर्थ अगले अंकों में लिए जा सकें।

असंभावना – महावाक्य के द्वारा बतलाये गई जीव और ब्रह्म की एकता के विषय में होनेवाले संशय को असंभावना कहते हैं।
असंभावना दो प्रकार की है। १) प्रमाणासंभावना . २) प्रमेयासंभावना.

१) प्रमाणासंभावना - वेदवाक्य जो कि प्रमाण हैं, वे जीव और ब्रह्म की एकता के प्रतिपादक हैं या कि कर्म और उपासना के प्रतिपादक हैं, ऐसा संशय प्रमाणासंभावना कहलाता है। अथवा प्रमाणरूप वेदवाक्य जीव और ब्रह्म की एकता के प्रतिपादक हैं या कि कर्म और उपासना के प्रतिपादक हैं, ऐसे संशय को प्रमाणासंभावना कहते हैं। ये असंभावना वेद के प्रमाण के विषय में और उसकी निर्दोषता के विषय में है। प्रमाणासंभावना की निवृत्ति श्रवण से होती है।
२) प्रमेयासंभावना – वेदान्तशास्त्र का प्रमुख प्रमेय अर्थात सिद्धांत (महावाक्य) अर्थात जीव और ब्रह्म का अभेद सत्य है, या कि उसके विपरीत भेद सत्य है; ऐसा जो संशय है उसे प्रमेयासंभावना कहते हैं। अनेक जन्मों के जीवभाव की भेदबुद्धि के कारण वह तत्व जो व्यापक, गुणातीत, कालातीत, निर्विकार है, वह मैं हूँ ; यह बात तुरंत समझ में नहीं आती और दृढ़ नहीं हो पाती। प्रमेयासंभावना की निवृत्ति मनन से होती है।

विपरीतभावना – अनेक जन्मों के संस्कारों के कारण देह आदि के प्रति सत्यत्वनिश्चय और उसके लिए कारणीभूत जीव और ब्रह्म के भेद के विषय में सत्यत्व का निश्चय; ऐसे विपरीत सत्यत्वनिश्चयों को विपरीतभावना कहते हैं। मैं देह ही हूँ ऐसा दृढ़ निश्चय, जगतसत्यत्व और कर्तृत्व/भोक्तृत्व यह विपरीत भावना का स्वरुप है। विपरीतभावना की निवृत्ति निदिध्यासन से होती है। असंभावना और विपरीतभावना ज्ञान के फल अर्थात परमानंद की प्राप्ति के लिए प्रतिबंधक हैं। उनके निरसनरूपी श्रवण, मनन और निदिध्यासन ज्ञान के लिए अप्रत्यक्षतः कारण हैं, न कि साक्षात।

वेदांत भास्कर उपक्रम की जानकारी

सद्ग्रंथ वाचन और निरूपण

ज्ञानेश्वरी भावदर्शन: https://www.youtube.com/@vastusiddhih/playlists

BMM - आनंदाचे तत्वज्ञान: www.youtube.com/@bmm-philosophy

श्रीगणपती अथर्वशीर्ष भावदर्शन: www.youtube.com/watch?v=6Wa-vhY5UV4&list=PLVUOs8gG-oRv5KPRs5ssUKYauKCk7QRgg

विवेक चूडामणि: https://youtube.com/playlist?list=PLNBQtHI3f1acaRQjtbbw34ThPWaMLshck&si=yIv7kheAMxzcFiFQ

संपर्क: ContactUs@vedantbhaskar.org

प. पू. डॉ. काका की ग्रंथसंपदा

परम पूज्य काका की आध्यात्मिक साहित्यिक संपदा का वैभव अवर्णनीय है। ब्रह्मसूत्र, उपनिषद, भगवद्गीता जैसे प्रस्थानत्रयी पर लिखे गए भाष्यग्रंथ, शंकराचार्य के अद्वैत वेदांत और मराठी संत साहित्य का सार समेटे अनेक ग्रंथ, तथा विविध आध्यात्मिक संकल्पनाओं का स्पष्ट और निर्विवाद विवेचन करने वाले असंख्य लेख - ऐसी उनकी समृद्ध ग्रंथसंपदा है।

- पंचदशी भावदर्शन
- संक्षेप शारीरक भावदर्शन
- विकास जीवनाचा
- गीता दीपस्तंभ
- नैष्कर्म्यसिद्धी भावदर्शन
- दासबोधचिंतनिका
- मांडूक्योपनिषद
- कठोपनिषद
- तैत्तिरीय उपनिषद
- ईशावास्योपनिषद
- बृहदारण्यकोपनिषद्
- छांदोग्योपनिषद
- केनोपनिषद
- प्रश्नोपनिषद
- मुण्डकोपनिषद विवरण
- दृक-दृश्य-विवेक भावदर्शन
- अपरोक्ष अनुभूती भावदर्शन
- सुखाचा शोध
- अध्यात्म आणि जीवन
- साधक सोपान
- साधकबोध
- ज्ञानदेवांचा हरिपाठ
- परमार्थ विज्ञान
- चांगदेव पासष्टी
- एकनाथांचा हरिपाठ
- आरती भावदर्शन
- विवेकचूडामणि
- श्रुती ज्ञानदीपका
- निवडक वेचे
- ब्रह्मसूत्र प्रवचने
- श्रीमद्भागवत बोधकथा
- गीता दीपस्तंभ हिंदी
- अंतरीचा ज्ञानदिवा
- दासबोध
- विवेकसिंधु
- समर्थ वाग्वैजयंती
  - (समर्थांची प्रासादिक वाणी)
- ब्रह्मसूत्र शांकरभाष्य भाग १
- ब्रह्मसूत्र शांकरभाष्य भाग २
- ब्रह्मसूत्र शांकरभाष्य भाग ३
- गणपती अथर्वशीर्ष भावदर्शन
- सोलीव सुख
- आत्माराम
- अनुग्रह
- नारद भक्तिसूत्रे
- पसायदान एक चिंतन
- महावाक्य चिंतन
- आत्मषटकम
- स्वानुभव दिनकर एक चिंतन
- पावा
- अद्वैत मकरंद
- विवेकानंद चरित्र
- जीवन सुंदर आहे
- पसायदान (इंग्लिश/English)
- दृक-दृश्य विवेक (इंग्लिश/English)
- The lighthouse of Bhagavad-Gita
- जर्नी टू ब्लिस (इंग्लिश/English)
- मनोबोध भावदर्शन
- विकास जीवनाचा
- आत्मदर्शन
- सार विचारसागर
- तीन उपनिषदे (ऐतरेय, छांदोग्य, प्रश्नोपनिषद)
- परमार्थ विज्ञान
- परमामृत
- रामदास भारे अंतरी
- चतुःश्लोकी भागवत (श्री एकनाथ महाराजकृत)
- श्रीमत् आद्य शङ्कराचार्य विरचित स्तोत्रावली (सार्थ व सटिक) - भाग 1
- श्रीमत् आद्य शङ्कराचार्य विरचित स्तोत्रावली (सार्थ व सटिक) - भाग 2
- सार्थ श्री सद्गुरू बाळूमामा विजय ग्रंथ
- साधना-पञ्चकम्

https://vedantbhaskar.org/sahitya

युवामंच

हनुमान चालीसा - वर्तमान पीढ़ी के लिए

डॉ. शेखर मायनिल (Neuroscientist)

श्रीहनुमान चालीसा अवधी भाषा (जो हिंदी की एक उपभाषा है) में एक महान कवि संत, श्री तुलसी दास जी द्वारा १६वीं शताब्दी ईस्वी में उत्तर प्रदेश, के वाराणसी नगर, भारत में लिखी गई थी। हनुमान चालीसा, जैसा कि नाम से पता चलता है, ४० दोहे के रूप में लिखी गई है, जिन्हें चौपाई कहा जाता है। इसमें दो आरंभिक दोहे हैं।

श्री गुरु चरन सरोज रज, निज मनु मुकुरु सुधारि।
बरनऊं रघुबर बिमल जसु, जो दायकु फल चारि॥ (१)
बुद्धिहीन तनु जानिके, सुमिरौं पवन-कुमार।
बल बुद्धि बिद्या देहु मोहिं, हरहु कलेस बिकार॥ (२)

श्री हनुमान चालीसा के आरम्भ के पहले दोहे श्री तुलसीदास कृत श्रीरामचरितमानस के अयोध्याकाण्ड से लिए गए है. इन दोहों में वे अपने गुरु के चरणों की धूल (सरोज रज) का आशीर्वाद मांगते हैं, जिससे उसी धूल वे अपने मन के दर्पण (मुखुरु) को स्वच्छ (सुधारी) कर सकें।

किस उद्देश्य से?

जिससे वे श्री हनुमान जी की निर्दोष महिमा (बिमल जसु) का वर्णन (बरनौं) और गान कर सकें, जिन्हें रघुकुल वंशने उच्चतम श्रेष्ठता प्रदान की है।

श्री हनुमान जी की महिमा का वर्णन और गान क्यों करें?

श्री हनुमान जी की महिमा का वर्णन और गान करने से उनके भक्तों को चार फल अथवा कर्मों (पुरुषार्थ) के चार लक्ष्य - धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की प्राप्त हो सकते हैं।

केवल हनुमान जी की महिमा गाने से इन सभी लक्ष्यों की प्राप्ति कैसे संभव है?

तुलसीदास जी भली-भांति जानते हैं कि जीवन के लक्ष्य अज्ञानी व्यक्ति द्वारा प्राप्त नहीं किए जा सकते। इसलिए, वे स्वयं को पूर्णतया अज्ञानी (बुद्धिहीन) मानते हुए श्री हनुमान जी, जो पवन देव (पवन कुमार) के पुत्र हैं, से प्रार्थना करते हैं कि वे उन्हें (देहु मोहि) शक्ति (बल), बुद्धि (बुद्धि) और ज्ञान (विद्या) प्रदान करें।

श्री हनुमान जी से शक्ति, बुद्धि और ज्ञान किस उद्देश्य से मांग रहे हैं तुलसीदास जी? जिससे वे अज्ञानता के कारण उत्पन्न सभी कष्टों (कलेश विकार) को दूर (हरहु) कर सकें, जो उनके लक्ष्यों की प्राप्ति में बाधा डाल रहे हैं।

अब इन दो दोहों की विस्तृत व्याख्या:

दोहा # १: किसी भी कार्य को पूर्ण करने के लिए मन का शुद्ध और स्पष्ट होना आवश्यक है। लेकिन यहाँ तुलसीदास जी लिखते हैं कि वे अपने मन के दर्पण को साफ करना चाहते हैं।

वे यह भी कह सकते थे, "कृपया मेरा मन शुद्ध करें।"

मन के दर्पण को क्यों?

क्योंकि तुलसीदास जी अपनी स्वयं की त्रुटियों को उसी दर्पण में देखना चाहते हैं। एक स्वच्छ दर्पण ही हनुमान जी की महिमा को प्रतिबिंबित कर सकता है। तुलसीदास जी अपने गुरु के चरणों की धूल से अपने मन के दर्पण को साफ करना चाहते हैं। यह एक काव्यात्मक और रूपक के रूप में कहा गया है कि अपने गुरु के चरणों में पूर्ण रूप से समर्पित होकर और उनकी सेवा में रहकर वे अपने मन को सभी अशुद्धियों से मुक्त कर सकते हैं।

स्वबोध या स्वयंबोध की ओर संकेत:

तुलसीदास जी स्वयंबोध या आत्मज्ञान की ओर संकेत कर रहे हैं। बिना आत्मज्ञान के कोई भी शत्रुबोध प्राप्त नहीं कर सकता— अर्थात भीतर और बाहर विद्यमान शत्रुओं के प्रति जागरूक नहीं हो सकता। ये तीन प्रकार की चुनौतियाँ कुछ इस प्रकार की हैं:

- आध्यात्मिक चुनौती – जो हमारे स्वयं के भीतर मौजूद होती है।
- आधिदैविक चुनौती – जो दैवीय शक्तियों और भाग्य से जुड़ी होती है।
- आधिभौतिक चुनौती – जो भौतिक दुनिया और सामाजिक परिस्थितियों से जुड़ी होती है।

आध्यात्मिक चुनौतियाँ – वे आध्यात्मिक संघर्ष जो व्यक्ति के अपने विचारों, भावनाओं और कार्यों से उत्पन्न होते हैं, जैसे: मानसिक स्वास्थ्य समस्याएँ जैसे चिंता या अवसाद, आध्यात्मिक संघर्ष या संदेह, व्यक्तिगत विकास और आत्म-सुधार की चुनौतियाँ

आदिदैविक चुनौतियाँ – वे चुनौतियाँ जो बाहरी या अलौकिक शक्तियों से उत्पन्न होती हैं और मनुष्य के नियंत्रण से परे होती हैं, जैसे: प्राकृतिक आपदाएँ जैसे भूकंप या तूफान, अप्रत्याशित घटनाएँ या भाग्य, अलौकिक या दिव्य हस्तक्षेप

आदिभौतिक चुनौतियाँ – वे चुनौतियाँ जो बाहरी, भौतिक या भौतिकवादी स्रोतों से उत्पन्न होती हैं, जैसे: शारीरिक चोट या हानि, पर्यावरण प्रदूषण या जलवायु परिवर्तन, दैनिक जीवन में बाहरी बाधाएँ या संघर्ष

भीतर के शत्रु" कौन हैं?

भीतर के शत्रु हमारी सच्ची प्रकृति के प्रति अज्ञानता से उत्पन्न होते हैं। "मैं शरीर हूँ" का भ्रम ही इन सभी आंतरिक शत्रुओं की जननी है। इस भ्रम की संतानें हैं – काम (असीम इच्छाएँ), क्रोध (गुस्सा), लोभ (लालच), मद (अहंकार), मत्सर (ईर्ष्या) आदि ।

"बाहरी शत्रु" कौन हैं?

आधुनिक संदर्भ में, "बाहरी शत्रु" उन बाहरी चुनौतियों को संदर्भित करता है जो किसी व्यक्ति या संगठन को प्रभावित कर सकते हैं। इनमें अन्तर्गत हैं:

- प्रतिद्वंद्वी – संसाधनों के लिए प्रतिस्पर्धा करने वाले प्रतिद्वंद्वी व्यवसाय या व्यक्ति।
- सामाजिक अशांति – विरोध, दंगे या अन्य प्रकार की सामाजिक अस्थिरता।
- आर्थिक मंदी – आर्थिक अस्थिरता या आर्थिक संकट।
- पर्यावरणीय चिंताएँ – जलवायु परिवर्तन, प्रदूषण या अन्य पर्यावरणीय समस्याएँ।
- नियामक चुनौतियाँ – कानूनों या नियमों में बदलाव जो संचालन पर नकारात्मक प्रभाव डाल सकते हैं।
- प्राकृतिक आपदाएँ – तूफान, भूकंप या बाढ़ जैसी घटनाएँ जो कार्यों में बाधा डाल सकती हैं।
- साइबर खतरे – हैकर्स, मैलवेयर या अन्य साइबर हमले जो कंप्यूटर द्वारा की गयी सुरक्षा कवच को प्रभावित कर सकते हैं।
- बाजार में परिवर्तन – उपभोक्ता प्राथमिकताओं या मांग में बदलाव।
- तकनीकी प्रगति – नई तकनीकें जो उद्योगों या व्यावसायिक मॉडल को बाधित कर सकती हैं।
- युद्ध का खतरा – शत्रु राष्ट्रों से युद्ध का ख़तरा, जो देश की अर्थव्यवस्था, शांति और प्रगति को अस्थिर कर सकता है।

बाहरी शत्रुओं को समझकर और उनकी तैयारी करके, व्यक्ति और संगठन चुनौतियों को बेहतर तरीके से पार कर सकते हैं और अपने लक्ष्यों को प्राप्त कर सकते हैं। आंतरिक शत्रु आत्मज्ञान की कमी और हमारे आसपास की अज्ञानता से उत्पन्न होते हैं, जो हमें अपने लक्ष्यों को प्राप्त करने से रोकते हैं। जब हम अपनी सोच, व्यवहार, लोगों के साथ बातचीत और अपने परिवेश में उपस्थित त्रुटियाँ को पहचान लेते हैं, तो आधी लड़ाई पहले ही जीत ली जाती है।

श्री हनुमान जी रघुवर कैसे बने?

जब श्री हनुमान जी लंका गए और माता सीता जी से मिले, तो उन्होंने श्री हनुमान जी को श्री राम के सबसे बड़े भक्त के रूप में पहचाना। श्री राम स्वयं रघुवंशी हैं, इसलिए माता सीता जी ने हनुमान जी को "सुत" (पुत्र) कहकर संबोधित किया। जिस क्षण माता सीता जी ने उन्हें अपना पुत्र कहा, उसी क्षण हनुमान जी रघुवर बन गए।

हैं सुत कपि सब तुम्हहि समाना। जातुधान अति भट बलवाना॥ (सुंदरकांड 15:4)

अजर अमर गुननिधि सुत होहू। करहुँ बहुत रघुनायक छोहू॥ (सुंदरकांड 16:2) यद्यपि हनुमान जी पहले श्री राम से मिले थे, लेकिन सबसे पहले माता सीता जी ने उन्हें अपना पुत्र कहा, और बाद में श्रीराम ने भी उन्हें "सुत" कहा।

सुनु सुत तोहि उरिन मैं नाहीं। देखेउँ करि बिचार मन माहीं॥ (सुंदरकांड 31:4)

वास्तविक जीवन में भी सबसे पहले माँ ही अपने बच्चे के सबसे निकट होती है, और पिता के साथ संबंध धीरे-धीरे विकसित होता है।

हमारे कार्यों के चार फल क्या हैं, और श्री हनुमान जी की महिमा का गान उनके भक्तों के लिए पुरुषार्थ (कार्य के लक्ष्य) कैसे प्रदान करता है?

हमारे जीवन के चार लक्ष्यः धर्म (सदाचारपूर्ण जीवन), अर्थ (धन और समृद्धि), काम (इच्छाओं की पूर्ति), और मोक्ष (जन्म और मृत्यु के चक्र से मुक्ति) हैं, जिन्हें श्री हनुमान जी की महिमा गाने से प्राप्त किया जा सकता है। लेकिन प्रश्न यह है कि श्री हनुमान जी की महिमा गाने से यह सब कैसे प्राप्त हो सकता है?

श्री हनुमान जी से धर्म का ज्ञानः

किष्किंधा कांड से लेकर उत्तरकांड तक, यदि हम श्रीरामचरितमानस में श्री हनुमान जी के जीवन का अध्ययन करें, तो हम उनसे धर्म सीख सकते हैं—कैसे व्यवहार करें, विभिन्न लोगों के साथ कैसे बातचीत करें, क्या बोलें, कितना बोलें, और निर्भय कैसे बनें। यह सीखना ही हमें जीवन के सही आचार संहिता या पूर्ण ईमानदारी के साथ धर्मयुक्त जीवन जीने की शिक्षा देता है।

अर्थ (धन और समृद्धि) का सही उपयोगः

जब हम धर्मयुक्त जीवन जीते हैं, तो उससे अर्जित धन और समृद्धि हमें व्यर्थ और हानिकारक कार्यों पर अपने धन को खर्च करने से रोकती है। बहुत से लोग गैर-धार्मिक पद्धतियों से पैसा अर्जित करते हैं और उस धन का उपयोग अपने जीवन में और पूरी दुनिया में तनाव और अशांति फैलाने के लिए करते हैं। लेकिन जब हम धर्म के अनुसार धन अर्जित करते हैं, तो हम इसे उचित प्रयोग कर सकते हैं।

काम (इच्छाओं की पूर्ति) और मोक्षः

धार्मिक पद्धतियों से अर्जित धन का सही उपयोग हमें अपनी इच्छाओं को पूरा करने की स्वतंत्रता देता है, और हम स्वधर्म में स्थिर रहते हैं।

मोक्ष क्या है और यह हर मानव के लिए परम लक्ष्य क्यों है?

मोक्ष का अर्थ जन्म और मृत्यु के चक्र से मुक्ति है, और यह परम लक्ष्य है क्योंकि इससे आत्मा सर्वोच्च अवस्था में पहुँच जाती है।

यह निम्नलिखित इन्फोग्राफिक में दर्शाया गया है:

(https://en.wikipedia.org/wiki/Snakes_and_ladders से अनुकूलित)

जन्म, मृत्यु और पुनर्जन्म के चक्र से मुक्ति का क्या अर्थ है?

सनातन धर्म विचार प्रणाली के अनुसार, कर्म का नियम कहता है कि हर कारण (कर्म) का एक प्रभाव होता है; हर इच्छा को फलित होना ही पड़ता है, चाहे वह इस जीवन में हो या अगले कई जन्मों में। इसलिए, हम इस जीवन में जो कुछ भी अनुभव कर रहे हैं, वह हमारे पिछले कर्मों का परिणाम है।

सामान्यतः, चूँकि ये कर्म अनजाने में किए जाते हैं, हम यह नहीं समझ पाते कि हमें अपने पिछले कर्मों (कारण) के किस विशेष प्रभाव का अनुभव हो रहा है। हम लगातार अधिक से अधिक "कारण" (अचेतन रूप से किए गए कर्म या वासनाएँ या संस्कार) संचित करते रहते हैं, और फिर उन कर्मों के प्रभावों का अनुभव करने के लिए हमें एक नया जन्म लेना पड़ता है।

यही हमारे बार-बार पुनर्जन्म का कारण बनता है, जो हमारे पिछले कर्मों द्वारा निर्धारित होता है। याद रखें कि जीवन के चार लक्ष्य—धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष—इस बात पर जोर देते हैं कि हमारे सभी कार्य पूर्ण जागरूकता और सजगता के साथ किए जाने चाहिए।

धार्मिक कार्यों (धार्मिक कर्मों) से अर्जित धन (अर्थ), जो पूर्ण जागरूकता के साथ किया गया हो, हमें उन इच्छाओं को पूरा करने में मदद करेगा जो हमारे हृदय में लंबे समय से संचित हैं। और जब इन इच्छाओं को पूर्ण जागरूकता के साथ भोगा जाता है, बिना नए कर्मों को संचित किए, तो यह हमें पूर्ण कर्ममुक्त जीवन की ओर ले जाता है। यह कर्ममुक्ति ही मोक्ष कहलाता है।

मोक्ष का दूसरा अर्थः मोक्ष शब्द संस्कृत के दो शब्दों से बना है - मोह + क्षय = मोक्ष, जिसका अर्थ है मोह या भ्रांति का विनाश ।

मोक्ष को निम्नलिखित विशेषताओं से पहचाना जाता हैः

- पिछले कर्मों के प्रभाव से मुक्ति – क्योंकि पूर्ण जागरूकता में किए गए कर्म कोई संस्कार (वासनाएँ या इच्छाएँ) उत्पन्न नहीं करते हैं।
- अपने सच्चे स्वरूप का ज्ञान और परम सत्य से जुड़ाव – आत्मा का सर्वोच्च चेतना से मेल।
- अज्ञानता, दुख और पीड़ा का अंत – जिससे जीवन में शाश्वत शांति और आनंद प्राप्त होता है।

हमारे सच्चे स्वरूप (TRUE SELF) की अनुभूति को मोक्ष प्राप्ति के समान क्यों माना जाता है?

क्योंकि हमारा सच्चा स्वरूप आनंदमय (Blissful) है, जहाँ सभी इच्छाएँ पूर्ण होती हैं। वास्तव में, वहाँ कोई इच्छाएँ पूरी करने के लिए बचती ही नहीं हैं। जब व्यक्ति अनुभव करता है कि उसने पहले से ही सब कुछ प्राप्त कर लिया है—जब कुछ भी प्राप्त करने की कोई आवश्यकता ही नहीं होती—तो यही मोक्ष होता है। सभी उपलब्धियाँ, इच्छाएँ और प्रयास तब तक होते हैं जब तक हम स्वयं को शरीर मानते हैं। मोक्ष का अर्थ यह नहीं है कि हम संसार में कर्म करना बंद कर देते हैं, अपितु यह है कि "मैं कर्म कर रहा हूँ" की धारणा समाप्त हो जाती है।

दोहा # 2:

श्री तुलसीदास जी स्वयं को बुद्धिहीन क्यों मानते हैं?

तुलसीदास जी स्वयं को एक सामान्य व्यक्ति मानते हैं, जब वे कहते हैं कि वे बुद्धिहीन (बुद्धि से रहित) हैं। वास्तव में, वे इस धरती पर चलने वाले सबसे विकसित आत्माओं में से एक हैं—अत्यंत ज्ञानी और बुद्धिमान। लेकिन वे इस कथन के माध्यम से हमें शिक्षित करने का प्रयास करते हैं।

वे पाठक को आहत किए बिना, यह स्वीकार करते हैं कि वे बुद्धि से रहित हैं क्योंकि वे शरीर चेतना से जुड़े हुए हैं। वे स्वयं को "यह मेरा शरीर है" की अपेक्षा "मैं शरीर हूँ" के रूप में देखते हैं।

वे हमें यही सिखाने का प्रयास कर रहे हैं कि स्वयं को केवल शरीर मानना और यह स्वीकार न करना कि "मेरे पास एक शरीर है"—यह अज्ञानता का उच्चतम रूप है। यही अज्ञानता (मोह) सभी अन्य कष्टों और पीड़ाओं की जड़ है।

श्रीरामचरितमानस के उत्तरकांड में कागभुसुंडी जी गरुड़ जी से कहते हैंः

मोह सकल ब्याधिन्ह कर मूला। तिन्ह ते पुनि उपजहिं बहु सूला॥

(उत्तरकांडः 120:15), मोह ही सभी रोगों और कष्टों की जड़ है।

इसी कारण तुलसीदास जी श्री हनुमान जी (पवन कुमार, वायु देव के पुत्र) का स्मरण (सुमिरन) करते हैं, जिससे कि वे उन्हें शारीरिक शक्ति, नैतिकता और चरित्र बल प्रदान करें।

तुलसीदास जी ने सीधे ज्ञान माँगने के स्थान पर बल (शक्ति), बुद्धि और विद्या क्यों माँगी?

अन्ततोगत्वा, सही ज्ञान अज्ञानता को दूर कर सकता है, जो भ्रमित सोच का मूल कारण है। परंतु उन्होंने जिस क्रम में माँगा, वह अत्यंत महत्वपूर्ण है।

तुलसीदास जी सबसे पहले बल (शारीरिक, नैतिक और चरित्रबल) माँगते हैं, फिर बुद्धि—जिसके द्वारा ज्ञान प्राप्त किया जा सके, और अंत में विद्या (ज्ञान)।

इतिहास उन विद्वानों—ज्ञान-धन से सम्पन्न से भरा पड़ा है, किन्तु सैन्य शक्ति रहित—जो आक्रांताओं का प्रतिरोध न कर सके और अपने घरों से निष्कासित या संहारित कर दिए गए। वे "लेखनी तलवार से अधिक शक्तिशाली है" के सिद्धांत से आसक्त रहे, पर यह नहीं समझ सके कि यह केवल उन्हीं पर लागू होता है जिनके हाथों में लेखनी के साथ वास्तविक शक्ति भी हो।

तुलसीदास जी अपने समय के अग्रणी समाज सुधारक थे। उनके नायक, गुरुदेव, मार्गदर्शक और गुरु श्री हनुमानजी महाराज हैं, जो दुर्बल नहीं, बल्कि अत्यंत शक्तिशाली हैं।

श्री हनुमान जी उस लोकोक्ति में पूर्ण विश्वास रखते हैं—"सदैव, सबसे शक्तिशाली सेना के पक्ष में ही भाग्य होता है।"

एक शक्तिशाली शरीर के बिना न तो कोई उपदेश दे सकता है, न शिक्षा प्रदान कर सकता है, और न ही आध्यात्मिक साधना कर सकता है—यहाँ तक कि मोक्ष का उच्चारण तक कठिन हो जाता है।

केवल शारीरिक बल से युक्त व्यक्ति ही नैतिक दृढ़ता और चरित्रबल को धारण कर सकता है। श्री हनुमान जी से शक्ति का आशीर्वाद प्राप्त करने के बाद, तुलसीदास जी उनसे बुद्धि और फिर विद्या (ज्ञान) प्रदान करने की विनती करते हैं। विद्या का अर्थ ज्ञान है, और बुद्धि वह क्षमता है जिसके माध्यम से हम ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं। एक उदाहरणः एक पात्र को बुद्धि या बुद्धि-शक्ति के रूप में देखें, और विद्या को उस पात्र में रखे अमृत के रूप में मानें। यदि पात्र ऊतकपत्र (टिशू पेपर) से बना हो, तो क्या वह अमृत को एक मिनट के लिए भी संभाल सकता है? निश्चित रूप से नहीं। जिस तरह अमृत को सुरक्षित रखने के लिए एक सशक्त पात्र की आवश्यकता होती है, उसी तरह ज्ञान को धारण करने के लिए एक शारीरिक बल, नैतिक दृढ़ता और चरित्रबल की आवश्यकता होती है।

तो, वह ज्ञान क्या करेगा?

हरहु कलेश विकार। केवल ज्ञान ही हमारे दुखों को दूर कर सकता है। विकार (बिकार) का अर्थ परिवर्तन या संशोधन होता है, जिसे हम स्वीकार करने से डरते हैं या जिसे हम अपने भीतर होने से अस्वीकार करते हैं, क्योंकि हमारे पास स्वबोध (आत्मज्ञान) की कमी होती है।

कलेश (क्लेश) का अर्थ वह पीड़ा है जो दुःख, नकारात्मक प्रवृत्तियों और विकृतियों का कारण बनती है। ये हैं:

- अविद्या (अज्ञान)
- अस्मिता (अहंकार, जो अज्ञानता का परिणाम है)
- राग (वस्तुएँ या इच्छाएँ जो हमें अत्यधिक प्रिय हैं)
- द्वेष (वस्तुएँ या स्थितियाँ जो हमें अप्रिय लगती हैं)
- अभिनिवेश (मृत्यु का भय)

सारांशः तुलसीदास जी हमें सिखाते हैं कि पहले हमें अपने मन के दर्पण को स्वच्छ करना चाहिए, और यह गुरुदेव के चरणों की धूल से संभव है। सरल शब्दों में, गुरु की सेवा करें, जिससे मन शुद्ध होगा।

शुद्ध मन में भगवान की महिमा स्पष्ट रूप से प्रकट होगी, और इस भाव से जब हम श्री हनुमान जी की महिमा गाएँगे, तो हमें वही प्राप्त होगा जो हम चाहते हैं—उत्तम गुण (धर्म), समृद्धि और धन (अर्थ), आनंद (काम) और मोक्ष (मुक्ति)।

पवन कुमार का अर्थ

पवन कुमार का अर्थ वायु देव के पुत्र है। वायु सबसे बड़ा शुद्धिकारक है। उदाहरण के लिए, यदि कोई कक्ष, जो कई दिनों से नहीं खोला गया है, खोला जाए, तो हवा भीतर प्रवेश करके उस वातावरण को शुद्ध कर देती है।

इसी प्रकार, वायु देव के पुत्र श्री हनुमान जी जहाँ भी जाते हैं, वहाँ शुद्धता और पवित्रता फैलाते हैं।

पवन कुमार का दूसरा अर्थ:

हवा हमारी सेवा बिना किसी दिखावे या अहंकार के करती है।

इसी तरह, श्री हनुमान जी सदैव बिना किसी अहंकार या "मैं" भाव के हमारी सेवा में लगे रहते हैं।

वे हमारे भीतर प्राण (Vital Air) के रूप में विद्यमान हैं।

श्री हनुमान जी सभी प्राणियों में श्रीराम की सेवा करते हैं। श्रीरामचरितमानस के किष्किंधा कांड में श्री हनुमान जी ने श्रीराम से पूछा कि उनका अनन्य भक्त (जो एकमात्र भगवान की भक्ति में लीन रहता है) कौन है। श्रीराम ने उत्तर दिया—

सो अनन्य जाकें असि मति न टरइ हनुमंत।
मैं सेवक सचराचर रूप स्वामि भगवंत॥ (किष्किंधा कांडः 3)

"हे हनुमान, वह ही मेरी अनन्य भक्ति करता है, जो कभी नहीं भूलता और इस दृढ़ विश्वास में अडिग रहता है कि वह सेवक है और समस्त चराचर सृष्टि उसके स्वामी के स्वरूप में प्रकट होती है।"

इस संदर्भ में, हनुमान चालीसा एक गहन आध्यात्मिक मार्गदर्शक के रूप में उभरती है, जो न केवल योग के सिद्धांतों बल्कि आधुनिक न्यूरोसाइंस की गहरी अंतर्दृष्टियों से जुड़ती है।

इस दृष्टिकोण पर हम अगले चरणों में मीमांसा करेंगे ।

हनुमान चालीसा के छंद प्राचीन और वैज्ञानिक ज्ञान के बीच एक पुल के रूप में कार्य करते हैं, यह प्रकट करते हुए कि भक्ति, अनुशासन और जागरूकता हमें ऊँचे स्तर की समझ तक पहुँचा सकते हैं।

चालीसा का मूल संदेश:

हनुमान चालीसा हमें निःस्वार्थ सेवा, अहंकार और आसक्ति से मुक्त जीवन को अपनाने के लिए प्रेरित करती है, जो सच्चे आध्यात्मिक उत्थान का सार है।

यदि हम इसके छंदों के गहरे अर्थों में उतरें, तो स्पष्ट होता है कि हनुमान चालीसा योगिक प्रथाओं से सहज रूप से मेल खाती है। योग, जो शरीर, मन और आत्मा के सामंजस्य पर केंद्रित है, उसे चालीसा में शुद्धता, शक्ति और अडिग भक्ति के माध्यम से प्रकट किया गया है।

इसके अतिरिक्त, चालीसा की शिक्षाएँ आधुनिक न्यूरोसाइंस से भी जुड़ती हैं, क्योंकि यह एकाग्रता की शक्ति, श्वास नियंत्रण और ध्यानपूर्ण पुनरावृत्ति की ओर संकेत करती है—जो हमें उन्नत संज्ञानात्मक और भावनात्मक अवस्था प्राप्त करने के मार्ग दिखाती हैं।

चालीसा का संदेश मात्र अनुष्ठानिक पाठ से कहीं आगे बढ़कर है।

जब साधक इसकी गहरी शिक्षा को आत्मसात करते हैं, तो वे परम ज्ञान की ओर अग्रसर होते हैं—जिसमें समस्त सृष्टि में दैवीय सत्ता की अनुभूति होती है।

यह अनुभूति गहन विनम्रता को जन्म देती है, जो स्वयं की सीमाओं को समाप्त कर देती है, जिससे व्यक्ति चर और अचर सभी प्राणियों में ईश्वर की निःस्वार्थ सेवा कर सकता है। यह अवस्था—"मैं" भाव से मुक्त और अनंत प्रेम से परिपूर्ण—आध्यात्मिक और बौद्धिक विकास का उच्चतम स्तर है।

आगामी पत्रिका के संस्करण इन विषयों को और गहराई से खोजेंगे, यह समझाने के लिए कि हनुमान चालीसा इन गहन आध्यात्मिक परिवर्तन को कैसे प्रेरित करती है और कैसे इसकी शाश्वत शिक्षा आज की चेतना और आध्यात्मिकता की खोज में अत्यधिक प्रासंगिक बनी हुई है।

तो, बने रहें...

पाठकों को आमंत्रित किया जाता है कि वे इस विषय से संबंधित
अपने प्रश्न हमें इस ईमेल पते पर भेजें: newsletter@vedantbhaskar.org
उत्तर दिए जाएँगे, और अनुमति मिलने पर, प्रश्नों को पत्रिका के आगामी लेख में शामिल किया जा सकता है।

लेखक का परिचय:

डॉ. चंद्रशेखर मायनिल – शिकागो, अमेरिका

डॉ. चंद्रशेखर मायनिल एक प्रतिष्ठित शिक्षक, लेखक और न्यूरोसाइंटिस्ट हैं। सेवानिवृत्ति से पहले वे शिकागो स्थित नॉर्थवेस्टर्न यूनिवर्सिटी के फीनबर्ग स्कूल ऑफ मेडिसिन में प्रोफेसर और पीडियाट्रिक न्यूरोसर्जरी रिसर्च प्रोग्राम के निदेशक थे। उन्होंने १५ वर्षों से अधिक समय तक Developmental Neurobiology में Eleanor Clarke Research Scholar Chair का पद संभाला। डॉ. मायनिल और उनके सहयोगियों ने मस्तिष्क और रीढ़ की हड्डी के विकास तथा बच्चों के ब्रेन ट्यूमर पर महत्वपूर्ण और क्रांतिकारी शोध किया है। डॉ. मायनिल बालसंस्कार वर्ग के विद्यार्थियों को आधुनिक न्यूरोसाइंस के दृष्टिकोण से योगिक साधनाओं का शाश्वत और अमूल्य ज्ञान प्रदान करने के लिए मार्गदर्शन कर रहे हैं।

वेदांत भास्कर - मंगलनिधी

वेदांत भास्कर संस्था के इस कार्य में आपका आर्थिक सहयोग हमारे लिए अत्यंत मूल्यवान है।
संस्था को दी गई दान राशि पर कर छूट लागू है।

VEDANT BHASKAR
at upasana@vedantbhaskar.org

Zelle

संपर्क: ContactUs@vedantbhaskar.org

कार्यवृत्तांत

वेदांतभास्कर अमेरिका उपक्रम - २०२५

श्रीमती मृणाल बुजोणे

उठी उठी बां पंढरीराया। प्रभात समयो पातला।
वैष्णवांचा मेळा। गरुड पारि दाटला ॥
उठी उठी बां रघुनाथा विनवी कौसल्या माता॥
उठुनी प्रातःकाळी। तुळस वन्दावी माऊली। तुळस संतांची साऊली।

ऐसी अनेक भूपालियाँ, आरतियाँ और अंत में "नामा" म्हणे - तुमच्या चरणावरी माथा आज्ञा द्यावी आता येतो आम्ही . यह प्रार्थना यदि सुबह-सुबह कानों पर पड़ती है, तो ऐसा ही लगता है कि मानो भारत के किसी गाँव के मंदिर में काकड़ आरती चल रही है... पर यह है अमेरिका की १ जनवरी की सुबह... आश्चर्य हुआ ना ? हमारे भारत के रिश्तेदारों को भी ऐसा ही लगता है। अगर अंग्रेज़ी नववर्ष का पहला दिन इतने सांस्कृतिक ढंग से मनाया जा रहा है, तो सालभर कौन-कौन से आध्यात्मिक कार्यक्रम होते हैं, यह जानने की उत्सुकता तो स्वाभाविक है।

वेदांत-भास्कर त्रैमासिक के इस संस्करण में हम अमेरिका के आध्यात्मिक कार्यक्रमों के बारेमे जानकारी देंगे । २०२५ में जनवरी से लेकर आज गुरुपूर्णिमा तक कौन-कौन से नियमित और विशेष उपासना कार्यक्रम हुए, आगे कौनसे कार्यक्रम आयोजित होने वाले हैं—यदि आप इनमें सहभागी होना चाहते हैं तो संपर्क कि पूरी जानकारी , आपको इस वृत्तांत में मिलेगी। सद्गुरु परम पूज्य डॉक्टर काका का शुभ संकल्प, अर्थात् ईश्वरी योजना का फलस्वरूप, बे-एरिया में डॉक्टर काका की प्रवचनमाला और अमेरिका स्थित साधकों का मार्गदर्शन वर्ष २००२ से ही प्रारंभ हो गया था। किंतु हम इतना पीछे न जाकर, वेदांत भास्कर अमेरिका संस्था की स्थापना से लेकर अब तक के उपक्रमों का संक्षिप्त अवलोकन करेंगे।

स्वामी गोविंद देवगिरी महाराज रामकथा और वेदांत भास्कर संस्था की स्थापना

परमेश्वर की कृपा से, अर्थात् सद्गुरू के संकल्प से, जीव के उद्धार के लिए आवश्यक आध्यात्मिक ज्ञान के प्रचार और प्रसार हेतु वेदांत भास्कर संस्था की स्थापना जुलाई २०२४ में परम पूज्य काका के जन्मदिन के शुभ अवसर पर की गई।

स्वामी गोविंद देवगिरी महाराज के अमृत वचनों से रामकथा का आयोजन हुआ और उसी मंच पर पहले ही दिन वेदांत भास्कर अमेरिका संस्था का स्वामीजी के मंगल हाथोंसे उद्घाटन हुआ। यह मणिकांचन, दुग्ध-शर्करा जैसा योग, केवल सद्गुरु की कृपा से ही संभव हुआ। कथा के स्थल BAPS स्वामीनारायण मंदिर में स्वामीजी की भव्य शोभायात्रा निकाली गई। स्वामीजी का श्री मंगेशदादा के निवास स्थान पर भव्य स्वागत किया गया- फुलों कि पथ रंगोली, पुष्पवर्षा, सुहागिनों द्वारा आरती - ऐसा पारंपरिक और मनमोहक समारोह साक्षात देखने का सौभाग्य कई साधकों को प्राप्त हुआ। इस रामकथा का लाभ ८५०-९०० साधकों ने लिया।

४ जुलाई २०२५ – परम पूज्य स्वामीजी का मंच की ओर जाते समय पुष्पवर्षा द्वारा स्वागत किया गया।

पू. मंगेश दादा - कार्यगौरव सन्मान:

१६ मार्च २०२५ को पूज्य मंगेश दादा को उनके आध्यात्मिक कार्य के लिए शिवगड आध्यात्मिक ट्रस्ट, मुरगुड की ओर से कार्यगौरव सम्मान से विभूषित किया गया। श्री मंगेश फडके ने पिछले २५ वर्षों से 'भोगभूमि' के रूप में प्रसिद्ध अमेरिका में रहकर, वहाँ की भौतिक आकर्षणों से प्रभावित हुए बिना, सद्गुरु परम पूज्य डॉक्टर काका की आज्ञा के अनुसार प्रस्थान त्रयी का गहन अध्ययन किया और साथ ही साधन चतुष्टय का समुचित आचरण कर आज के युवाओं के लिए एक आदर्श प्रस्तुत किया है। श्रीगुरु एक तत्व हैं, जो 'विश्वव्यापक तू ही है, ब्रह्मा, विष्णु, व्योमकेशी' के रूप में व्यापक हैं। श्री मंगेश फडके के माध्यम से वही गुरुतत्त्व हमारे सौभाग्य से सक्रिय है और वे श्रीगुरु द्वारा प्रदत्त आचार्य पद को जिम्मेदारी से निभा रहे हैं।

परम पूज्य मंगेश दादा का एक तप से भी अधिक समय से चल रहा यह कार्य यज्ञ हमने निकट से अनुभव किया है। इसी कार्यगौरव के अवसर पर हम सबको उनसे परिचित कराने के लिए हमने एक वृत्तचित्र तैयार की है। परम पूज्य डॉक्टर काका और परम पूज्य मंदाताई के आशीर्वाद से ही यह प्रयास संभव हो पाया है।

यह वृत्तचित्र आप सभी तक पहुँचाते हुए हमें अत्यंत आनंद हो रहा है। हमें विश्वास है कि इसे देखते समय आपको ईश्वरी योजना की अकल्पनीय शक्ति अवश्य अनुभव होगी।

परम पूज्य मंगेश दादा के इस अखंड कार्ययज्ञ को संतों के अमूल्य आशीर्वाद प्राप्त हुए हैं ही; आगे भी प्राप्त होते रहें, और श्रीसद्गुरु का यह कार्य निरंतर विकसित होता रहे, यही श्रीसद्गुरुचरणों में हमारी प्रार्थना है।

— वेदांत भास्कर अमेरिका परिवार

वृत्तचित्र: https://youtu.be/koI6ULWP74M

सद्ग्रंथ वाचन और निरूपण

हर शुक्रवार को परात्पर गुरु परम पूज्य खंदारकर महाराज द्वारा लिखित 'ज्ञानेश्वरी भावदर्शन' और सद्गुरु द्वारा लिखित 'संसारसागर में गीतादीपस्तंभ' इन ग्रंथों का परम पूज्य श्री मंगेश दादा द्वारा वाचन और निरूपण, नियमित और अनुशासित पद्धति से चल रहा है।

विवेक चूडामणि: २०२४ की श्रीकृष्ण जन्माष्टमी के अवसर पर 'विवेक चूडामणि' ग्रंथ पर दीर्घ प्रवचनमाला की शुरुआत हुई। यह एक अत्यंत शुभ और दुर्लभ संयोग था, जिसे स्वर्ण और कांचन के मिलन जैसा माना गया, और ऐसा प्रतीत हुआ मानो स्वयं श्रीकृष्ण का इस ज्ञानयज्ञ पर आशीर्वाद प्राप्त हुआ हो।

आनंदाचे तत्वज्ञान: आज के आधुनिक युग में तत्वज्ञान, अर्थात् परमार्थ का स्थान, उसका मूल उद्देश्य, हमारे व्यक्तिगत जीवन में उसका महत्व, उसकी जीवन के प्रति प्रासंगिकता - इन सभी मूलभूत विषयों को स्पर्श करने वाला यह विवेचन है। पारमार्थिक जीवन जीकर हम क्या प्राप्त करते हैं और यदि न जिएँ तो क्या खोते हैं - इन अत्यंत महत्वपूर्ण बिंदुओं पर इसमें विस्तार से चर्चा की जाती है।

मस्तकीं तो जाणा ठेविला कर

१६ मार्च २०२५, प.पू. मंगेश दादा का कार्यगौरव सन्मान - शिवगड अध्यात्मिक ट्रस्ट, मुरगूड

श्रवण हेतु मंच

सद्गुरु की ईश्वरीय संकल्पना का मूर्त रूप है "वस्तुसिद्धिः" - यह मंच, अर्थात यूट्यूब चैनल। परमार्थ में 'वस्तु' का अर्थ है सत्-घन, चित्-घन, आनंद-घन, अर्थात एकमेव अद्वितीय ब्रह्म और उसकी सिद्धि यानी आत्मज्ञान की प्राप्ति, स्वरूप-प्राप्ति। यह केवल विवेकयुक्त विचार से ही संभव है, जैसा कि विवेकचूडामणि के श्लोक में स्पष्ट कहा गया है:

"वस्तुसिद्धिरविचारेण न किंचित् कर्मकोटिभिः"

(वस्तु की सिद्धि केवल विचार से होती है, करोड़ों कर्मों से नहीं।)

वस्तुसिद्धिः - यह मंच, अर्थात यूट्यूब चैनल

डॉ. काका परिवार का अमेरिका में बहुआयामी कार्य चल रहा है। विशेष रूप से, सद्ग्रंथ वाचन उपक्रम के अंतर्गत विभिन्न आध्यात्मिक ग्रंथों का अध्ययन किया जाता है। इनका श्रव्य या दृश्य-श्रव्य रूप में रिकॉर्डिंग उपलब्ध हो, ऐसी साधकों की इच्छा है और यही सद्गुरु की भी संकल्पना है। इसी उद्देश्य से "वस्तुसिद्धिः विचारेण" नामक यूट्यूब सीरीज और पॉडकास्ट चैनल की शुरुआत की गई। इस उपक्रम का शुभारंभ रामनवमी के पावन दिन हुआ, जो एक महान कृपाशीर्वाद है।

वेदांतभास्कर वेबसाइट

डॉ. काका साधकों को निरंतर यह बताते हैं कि विचार एक महान साधन है, और सही विचार कैसे करें, यह बताने के लिए शास्त्र, संत और सद्गुरु सदा तत्पर हैं। इस विषय पर परम पूज्य काका और परम पूज्य मंदाताई के सैकड़ों प्रवचन वेदांतभास्कर वेबसाइट पर उपलब्ध हैं।

श्रवण की सुगमता के लिए, iOS और Android दोनों प्लेटफार्म पर मोबाइल ऐप भी उपलब्ध है।

वार्षिक श्रीदत्तजयंती उत्सव - दत्तजन्म

नियमित सामूहिक उपासना

श्रीदत्तजयंती उत्सव

२०११ में शुरू हुए श्रीगुरुचरित्र पारायण के व्यक्तिगत अनुष्ठान को, २०१२ से सामूहिक दत्त जयंती उत्सव का स्वरूप दिया गया।

इस दत्त सप्ताह में कई साधक और स्वयं मंगेशदादा भी श्रीगुरुचरित्र पारायण का अनुष्ठान, सभी नियमों का पालन करते हुए, कायिक (शारीरिक), वाचिक (वाणी से) और मानसिक तप के साथ करते हैं। लगभग ३-४ घंटे के प्रातःकालीन पारायण के बाद, संध्या में शेष साधकों के लिए दादा श्रीगुरुचरित्र का कथासार स्पष्ट करते हैं।

सभी को उस पारायण का पुण्य मिले, श्रीगुरुचरित्र की पावन कथाओं, उसमें छिपे ज्ञान और गूढ़ अर्थ का बोध हो, इस उद्देश्य से परम पूज्य मंगेशदादा प्रतिदिन श्रीगुरुचरित्र का कथासार सुनाते हैं।

कथासार के साथ-साथ विभिन्न संत विभूतियों का Zoom के माध्यम से मार्गदर्शन एवं आशीर्वाद, साधकों का चिंतन, बालोपासना और ह.भ.प. सौ. सोनाली ताई फडके द्वारा दत्त जन्म का कीर्तन - इस प्रकार यह उत्सव अत्यंत भव्य रूप में मनाया जाता है।

त्रैमासिक उपासना

स्वरूप का अनुसंधान या नाम का अनुसंधान, यह संत और सद्गुरु हमेशा एक महान साधन बताते हैं। इसे साधने और अभ्यास की निरंतरता बनाए रखने के लिए नियमित उपासना अत्यंत उपयोगी होती है, ऐसा सभी साधकों का अनुभव है। उपासना व्यक्तिगत तो होती ही है, लेकिन सामूहिक रूप में भी उसका विशेष लाभ होता है। **कृष्ण विष्णु हरी गोविंद । या नामाचे निखळ प्रबंध । माझी आत्मचर्चा विषद । उदंड गाती ॥** इस ज्ञानवाणी के अनुसार, हर तीन महीने में किसी एक भाग्यशाली साधक के घर त्रैमासिक उपासना होती है। शुरुआत नामस्मरण से होती है। शांत और गंभीर नामस्मरण से मन एकाग्र होकर उपासना करने हेतु सन्मुख होता है। सगुण उपासना, भजन, कीर्तन, स्तोत्र पाठ और तत्वचिंतन - इन सभी अंगों से यह उपासना पूर्ण होती है।

यजमान साधक को तत्वचिंतन प्रस्तुत करना चाहिए, यह परम पूज्य दादा का आग्रह रहता है, जिससे यह स्मरण रहे कि यह उपासना है, केवल सात्विक मनोरंजन नहीं।

इस वर्ष पहली त्रैमासिक उपासना शनिवार, १९ अप्रैल २०२५ को श्री एवं श्रीमती देव के निवास पर संपन्न हुई।

श्रीक्षेत्र मुरगुड में आयोजित शिवगढ़ स्थापना दिवस समारोह में परम पूज्य मंगेश दादा को मिला कार्यगौरव पुरस्कार, वेदांत भास्कर अमेरिका परिवार के लिए अत्यंत हर्ष का विषय है।

इस अवसर पर वेदांत भास्कर साधक परिवार ने परम पूज्य दादा का एक छोटा सा स्वागत-सत्कार कार्यक्रम आयोजित किया। दादा की मातोश्री की इस समारोह में उपस्थिति और आशीर्वाद, सभी साधकों के लिए विशेष सौभाग्य की बात रही।

इस समय सज्जनगड में की जानेवाली नित्य उपासना की गई। उपासना के अंत में परम पूज्य मंगेश दादा ने अपनी भारत यात्रा के अनुभव प्रस्तुत किए।

मासिक सामूहिक उपासना

इन नियमित उपासना और विशेष आयोजनों के साथ-साथ, छोटे बच्चों, युवाओं और उनके अभिभावकों को भी महीने में कम से कम एक बार सामूहिक उपासना के लिए एकत्र होना चाहिए, अपने मंदिर जाना चाहिए, वहाँ सेवा करनी चाहिए, हमारे धर्मस्थल धर्म-संगठन के केंद्र बनें, यही उद्देश्य है।

इसी उद्देश्य से, हर माह की संकष्टी चतुर्थी को सैन होजे के प्रसन्न गणेश मंदिर में सभी परिवार सहित एकत्र होकर श्रीगणपती अथर्वशीर्ष का पाठ करने की परंपरा परम पूज्य मंगेशदादा ने प्रारंभ की है।

समविचारी लोग एकत्र हों, धर्मकार्य की चर्चा करें, और हमारे मंदिर सदैव भक्तों से भरे रहें - ऐसे अनेक उद्देश्य इस मासिक सामूहिक उपासना से पूरे होते हैं।

(विनामूल्य) बालसंस्कार वर्ग

पूज्य दादा के पूरे परिवार के अमूल्य योगदान और निष्काम भाव से आरंभ हुए बाल संस्कार वर्ग में जल्दी ही बच्चों की संख्या बढ़ने लगी। सिलिकॉन वैली की स्टार्टअप संस्कृति के अनुरूप, आगे चलकर एक साधक के गैरेज में इस वर्ग की शुरुआत हुई।श्रीमद आद्य शंकराचार्य द्वारा रचित स्तोत्र, भगवद्गीता, रामरक्षा, मारुति स्तोत्र आदि का नियमित पाठ और समूहों में, बच्चों को समझ में आए ऐसी सरल भाषा में मार्गदर्शन किया जाता है।धर्मकार्य को आगे बढ़ाने के लिए केवल संस्कार ही नहीं, बल्कि तेजस्वी व्यक्तिमत्व की आवश्यकता है - समर्थ रामदासस्वामी के इस विचार को अमल में लाते हुए, वर्ग में सूर्यनमस्कार और विभिन्न योगासनों को भी शामिल किया गया है। अपने त्योहारों और उनके पीछे का वैज्ञानिक दृष्टिकोण, गौमाता का महत्व, अपना पारंपरिक पहनावा, अपनी अभिजात भारतीय भाषा एवं बोली - इन सभी बातों को भी पाठ्यक्रम में शामिल किया गया है। बालगोपालों के साथ-साथ उनके माता-पिता पर भी संस्कार करने का यह महत्वपूर्ण कार्य इस वर्ग के माध्यम से पिछले १३ वर्षों से निरंतर चल रहा है।

॥ प्रसन्न गणेश मंदिर, San Jose ॥

भाषा ही हमारी पहचान है। भाषा ही हमारा अस्तित्व है। भाषा बची रहेगी तभी संस्कृति बचेगी। इसलिए मातृभाषा का ज्ञान होना अत्यंत आवश्यक है। कल जब ये बच्चे बड़े होंगे और उन्हें दासबोध, ज्ञानेश्वरी, भगवद्गीता पढ़ने की इच्छा होगी, तब उन्हें अनुवादित ग्रंथ पढ़ने की कठिनाइयां न हो, वे मूल मराठी, संस्कृत और इतर पारिभाषिक ग्रंथों का अध्ययन करें और दूसरों को भी सरल भाषा में समझा सकें - इस उच्च उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए, बाल संस्कार वर्ग में अभिजात मराठी भाषा भी सिखाई जाती है।

श्रीदत्तजयंती उत्सव - बालोपासना

बालसंस्कारवर्ग - गणेशोत्सव

संप्रदाय समन्वय

संप्रदायों के बीच दीवारें नहीं खड़ी होनी चाहिए। प्रत्येक संप्रदाय की अपनी उपासना पद्धति, आराध्य देवता और नाम होता है, और उसी मार्ग पर चलना व्यक्तिगत स्तर पर अत्यंत उचित है।

सामूहिक और सामाजिक स्तर पर सनातन वैदिक हिंदू धर्म के संगठन के लिए कार्य करते समय, वेदांत भास्कर परिवार के सभी संप्रदायों के संतों से सौहार्दपूर्ण संबंध हैं।

इसी समन्वय का एक भाग—रविवार, ११ मई २०२५ को कांची कामकोटी सेवा फाउंडेशन के संयुक्त तत्वावधान में, श्री तुकाराम गणपति महाराज के मराठी अभंग और तमिल भाषा में निरूपण का आयोजन किया गया। भाषा कोई भी हो, पर उसमें निहित अद्वैत तत्व का निरूपण एक ही है - इस भाव से वेदांत भास्कर साधक वर्ग बड़ी संख्या में इस कार्यक्रम में उपस्थित रहा।

वेदांत भास्कर - उपासना केंद्र

एक तप से अधिक समय से चल रहे इस कार्य को अब संगठन का अधिष्ठान प्राप्त हुआ है। अब तक यह कार्य मुख्य रूप से Bay Area, California में केंद्रित था। सद्गुरु की कृपा से कार्य का विस्तार हो रहा है। अमेरिका जैसे विशाल देश में फैले और बिखरे साधकों की वास्तविकता को स्वीकारते हुए, साथ ही साधकों की स्थानीय उपासना और अध्ययन की आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए, वेदांत भास्कर संस्था के अंतर्गत विभिन्न स्थानों पर उपासना केंद्र स्थापित करने का निर्णय लिया गया है।हमें यह बताते हुए अत्यंत हर्ष हो रहा है कि इस संकल्प की पूर्ति करने वाले प्रथम उपासना केंद्र का शुभारंभ अमेरिका की राजधानी, वॉशिंगटन डीसी क्षेत्र में गुड़ी पड़वा के शुभ मुहूर्त पर किया गया! श्री शतानंद देसाई के प्रयासों से यह केंद्र सक्रिय हुआ है और साप्ताहिक दासबोध अध्ययन नियमित रूप से प्रारंभ हो गया है। सभी साधकों से अनुरोध है कि वे इसका लाभ लें और अपने परिचितों, विशेषकर उस क्षेत्र में रहने वाले स्थानीय लोगों को इसकी जानकारी दें।

श्रीरामकथा - संप्रदाय समन्वय

यात्रा विवरण - शिकागो

पू. श्री तुकाराम गणपती महाराज

बालसंस्कार वर्ग दिवाली २०२४ – वसुबारस के पावन अवसर पर गौ सेवा

उपक्रमों की झलकियाँ

वेदांत भास्कर अमेरिका - उद्घाटन समारोह

त्रैमासिक उपासना पीठ

बालोपासना

छत्रपती शिवाजी महाराज - प्रतिमा अनावरण

श्रीराम कथा की शुरुआत में बच्चों द्वारा स्तोत्र पाठ।

अभ्यास वर्ग का समापन

श्रीदत्तजन्म कीर्तनसेवा

अवघा रंग एक झाला

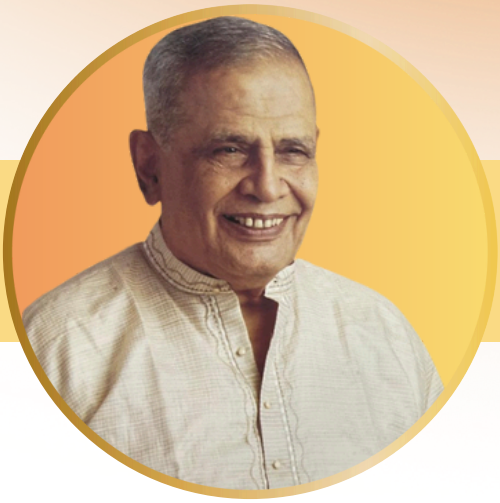

जो शब्दज्ञानें पारंगतु। ब्रह्मानंदे सदा डुल्लतु।
शिष्यप्रबोधिनीं समर्थु। यथोचितु निजभावें॥ (ए.भा.३.२९८)

डॉ. श्रीकृष्ण देशमुख अर्थात डॉक्टर काका

व्यवसाय से डॉक्टर रहे डॉ. श्रीकृष्ण द. देशमुख का जीवन सफल, पुरुषार्थ से पूर्ण और परिपूर्ण रहा है। 'अहर्निश रुग्ण सेवा' को जीवन का मूलमंत्र मानकर उन्होंने जो सात्विक वैद्यकीय सेवा की, उसका उचित सम्मान न केवल रोगियों ने किया, बल्कि महाराष्ट्र सरकार ने भी उन्हें इसके लिए सम्मानित किया है।

उन्हें वै. परमपूज्य शंकर महाराज खंदारकर, पंढरपुर का अनुग्रह प्राप्त हुआ। अखंड आत्मसाधना, आद्य शंकराचार्य द्वारा प्रतिपादित वेद-वेदांत आधारित अद्वैत तत्वज्ञान का निरंतर मनन-चिंतन, मराठी संत वाङ्मय का गहन अध्ययन और साथ ही प्राप्त हुई गुरुकृपा—इन सभी का परिणाम यह रहा कि ५२ वर्ष की आयु से लेकर आज तक, उन्होंने अपना वैद्यकीय व्यवसाय निःस्वार्थ भाव से दूसरों को सौंपकर, जीवन को अध्यात्म के प्रचार-प्रसार हेतु समर्पित कर दिया है।

उनकी वाणी प्रौढ़, गंभीर और प्रसादिक है। प्रसन्नता और स्पष्टवादिता जैसे गुणों से वह समृद्ध है। उन्होंने कभी भी जाति, धर्म, पंथ या संप्रदाय की संकुचितता को स्थान नहीं दिया। लोगों के मन में अध्यात्म और परमार्थ इन दो शब्दों के प्रति जो भी अनुचित अर्थ हैं, उन्हें वे दूर करते हैं और शुद्ध परमार्थ का स्वरूप सहजता से स्पष्ट करते हैं।
"शुद्ध विवेक से परमेश्वर को पहचानना चाहिए"- इस मुख्य सूत्र को केंद्र में रखते हुए, वे साधकों को भक्ति, कर्म, ज्ञान और ध्यान से युक्त उपासना की सही विधि बताते हैं।

उन्होंने विभिन्न प्रकाशन संस्थाओं के लिए आध्यात्मिक ग्रंथों की रचना की है और 'प्रसाद', 'सज्जनगड', 'भक्तियोग', 'जीवनविकास' आदि पत्रिकाओं में भी विपुल आध्यात्मिक लेखन किया है। साथ ही, अध्ययन वर्ग, प्रवचन, शिविर आदि के माध्यम से उन्होंने भारत भ्रमण और विदेश यात्राएँ भी की हैं।

उन्होंने अखिल भारतीय मराठी संत साहित्य सम्मेलन (उज्जयिनी) के अध्यक्ष पद का भी गौरव प्राप्त किया है। २००३ में, कोल्हापुर के यादव मठ द्वारा उन्हें "ज्ञानभूषण" की उपाधि से सम्मानित किया गया। आध्यात्मिक क्षेत्र में उत्कृष्ट ग्रंथनिर्मिति के लिए दिया जाने वाला श्री.निलंगेकर प्रायोजित "श्री मुकुंदाचार्य" यह विद्वत पुरस्कार "पंचदशी भावदर्शन" ग्रंथ को फरवरी २००६ में औरंगाबाद के एकनाथ संशोधन मंदिर की ओर से प्रदान किया गया। नरसिंहवाडी (नरसोबाची वाडी) संस्थान ने भी उनका इसी प्रकार सत्कार किया है। ऐसे ही अनेक अन्य पुरस्कारों और सम्मानों से वे विभूषित है!